अनुक्रमणिका

विषय-सूची — पृष्ठ-संख्या

१.श्रीअक्षय युगलजी का चमत्कारिक प्राकट्य.०३
(संकलन / लेखन - संतश्री भामिनीशरणजी, मानमंदिर)
२.श्रीसद्गुरुदेव एवं उनका स्वरुप ०५
(संकलनकर्त्री / लेखिका –साध्वी गौरीजी, मान मन्दिर, बरसाना)
३. श्रीमाताजी गौशाला में एक विशालतम 'गौ-चिकित्सालय' का शिलान्यास.....११
(संकलन/लेखन- श्रीध्रुवदासजी, मान मन्दिर)
४. श्रीकृष्ण-रसामृत.....१६
व्यासाचार्या साध्वी मुरलिकाजी (मानमन्दिरवासिनी, गह्वरवन, बरसाना) द्वारा कथित 'श्रीमद्भागवत-कथा'(९/१/२०१४)
५. श्रीराधासुधानिधि १८
(संकलनकर्त्री / लेखिका – साध्वी चंद्रमुखीजी, मान मन्दिर, बरसाना)
६.गोपीगीत.....२०
(संकलनकर्त्री / लेखिका – साध्वी माधुरीजी, मान मन्दिर, बरसाना)
७. नाम-महिमा.....२३
(संकलनकर्त्री / लेखिका – साध्वी ब्रजबाला जी, मान मन्दिर, बरसाना)
८. धाम-महिमा.....२५
(संकलनकर्त्री / लेखिका – साध्वी सुगीताजी, मान मन्दिर, बरसाना)
९ श्रीमद्भगवद्गीता.....२७
(संकलनकर्त्री / लेखिका – साध्वी पद्माक्षीजी, मान मन्दिर, बरसाना)
१०.श्रीमद्भागवत माहात्म्य कथा.....२९
(संकलनकर्त्री / लेखिका –साध्वी दिव्याजी, मान मन्दिर, बरसाना)
११. Shelter of Bhagvaan.....३२

संरक्षक

श्री राधामानबिहारी लाल

प्रकाशक – राधाकान्त शास्त्री,

मान मंदिर सेवा संस्थान

गह्वर वन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.)

Website :www.maanmandir.org

E-mail :ms@maanmandir.org

mob. : 9927338666, 9837679558

श्री अक्षय युगलजी

|| राधे किशोरी दया करो ||

हमसे दीन न कोई जग में, बान दया की तनक ढरो |
सदा ढरी दीनन पै श्यामा, यह विश्वास जो मनहि खरो ||
विषम विषयविष ज्वालमाल में, विविध ताप तापनि जु जरो |
दीनन हित अवतरी जगत में, दीनपालिनी हिय विचरो ||
दास तुम्हारो आस और की, हरो विमुख गति को झगरो |
कबहँ तो करुणा करोगी श्यामा, यही आस ते द्वार पर्‌यो ||

श्रीमानमंदिर की वेबसाइट www.maanmandir.org के द्वारा आप बाबाश्री के प्रातःकालीन सत्संग का ८ से ९ बजे तक तथा संध्याकालीन संगीतमयी आराधना का सायं ६:०० से ७:३० बजे तक प्रतिदिन लाइव प्रसारण देख सकते हैं |

विशेष:- इस पत्रिका को स्वयं पढ़ने के बाद अधिकाधिक लोगों को पढ़ावें जिससे आप पुण्यभाक् बनें और भगवद्-कृपा के पात्र बनें | हमारे शास्त्रों में भी कहा गया है –

सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च तपो दानानि चानघ | जीवाभयप्रदानस्य न कुर्वीरन् कलामपि || (श्रीमद्भागवत३/७/४१)

अर्थ:- भगवत्तत्त्वके उपदेश द्वारा जीव को जन्म-मृत्यु से छुड़ाकर उसे अभय कर देने में जो पुण्य होता है, समस्त वेदों के अध्ययन, यज्ञ, तपस्या और दानादि से होनेवाला पुण्य उस पुण्य के सोलहवें अंशके बराबर भी नहीं हो सकता |

प्रकाशकीय

गुरुरादिरनादिश्च गुरुः परं दैवतम् | गुरौः परतरं नास्ति तस्मै श्री गुरुवे नमः ||

ऐसे गुरुदेव जिनसे बढ़कर कुछ भी नहीं है उन परमात्मस्वरूप गुरु को महिमामण्डित करना किसी जीव की सामर्थ्य नहीं है | जो सतत् अन्धकार का या मूल अज्ञान का विनाश करने वाले हैं, जो अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जाते हैं उन्हें भगवान् से भी बड़ा बताया गया है –

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुदेवो महेश्वरः | गुरुः साक्षात् परं ब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः ||

इतनी महिमा होने पर भी यदि वास्तविक सद्गुरु की प्राप्ति नहीं होती है तो गुरु के परित्याग का भी शास्त्र अनुमोदन करते हैं | सद्गुरु वही है जो हमें समस्त कामनाओं से मुक्त कराकर भगवत्प्राप्ति करा दे | भारतवर्ष में इस विषय में इतनी अंधता है कि लोग समझते हैं कि गुरु के बिना मोक्ष नहीं है परन्तु यदि गुरु ही अन्धकार में डूबा हुआ है तो वह किसी को कैसे सद्गति प्रदान करायेगा | आजकल हो भी यही रहा है –

गुर सिष बधिर अंध का लेखा । एक न सुनइ एक नहिं देखा ॥

अन्धा अंधे का गुरु बन रहा है | सामने कुआ है और अंधा गुरु अपने शिष्य को कह रहा है कि मेरे पीछे चले आओ तो परिणाम क्या होगा यह सभी जानते हैं | एक उदाहरण हमने ऐसा स्वयं देखा था – गरुपूर्णिमा के अवसर पर अधिकांशतः गुरु-पूजन के लिए शिष्य आया करते हैं | कदाचित् एक शिष्य पर्याप्त गुरु-दक्षिणा नहीं लाया तो गुरुदेव रुष्ट हो गए और दोनों में वाद-विवाद हो गया, गुरुदेव बोले कि जा अब कभी मत आना, हम समझ लेंगे कि हमने किसी कुत्ते के गले में पट्टा बाँध दिया हो | इस पर शिष्य भी बोला कि हाँ ठीक है, हम भी समझलेंगे कि कोई कुत्ता हमारा कान सूँघ गया हो | इस तरह कामनाओं से ग्रसित गुरु अथवा शिष्य कोई हो, दोनों का कल्याण कभी नहीं होगा, सद्गुरु की अप्राप्ति पर भगवान् को ही गुरु बनाया जा सकता है | भगवान् ही नेत्र हैं एवं वही प्रकाश भी हैं, अतः वे ही सच्चे गुरु हैं | जो लोग कहते हैं कि गुरु के बिना भजन का कोई औचित्य नहीं है, वे वास्तव में गुरु नहीं हैं, स्वार्थी हैं | कहा भी गया है –

गुरु पितु मातु बंधु पति देवा । सब मोहि कहँ जाने दृढ़ सेवा ॥

उमा राम सम हित जग माहीं । गुरु पितु मातु बंधु प्रभु नाहीं ॥

यही कारण था कि चैतन्य महाप्रभुजी ने किसी को भी अपना शिष्य नहीं बनाया था | उन्होंने कहा कि इतने छोटे बनो कि तुम से अधिक छोटा कोई न हो, भगवान् स्वतः मिल जाएँगे | हम जब स्वामी बन जाते हैं तो हमारी हर वस्तु अपवित्र हो जाती है | हमारे पूज्य गुरुदेव श्रद्धेय श्रीरमेशबाबाजी महाराज के लाखों अनुयायी हैं परन्तु उन्होंने भी आज तक किसी को शिष्य नहीं बनाया परन्तु उनका प्रत्येक सेवक बिल्कुल कामनाशून्य होकर निरन्तर भगवद्भक्ति में निमग्न रहता है | यही सद्गुरु की पहचान है कि वह हमें कामनाशून्य बनाकर दैन्यादि गुणों से युक्त कर दें |

राधाकांत शास्त्री

व्यवस्थापक, मान-मन्दिर सेवा संस्थान

श्रीअक्षय युगलजी का चमत्कारिक प्राकट्य

(संकलन/लेखन - श्रीभामिनीशरणजी, मान मन्दिर)

श्रीमानमन्दिर के आराधना भवन 'रसमण्डप' में प्रतिदिन सायंकाल 0६:00 बजे से 0७:30 बजे तक ब्रजगोपिकाओं और गोपिकावतार भक्तिमती श्रीमीराबाईजी की रसोपासना पर आधारित दिव्य नृत्य-गानमयी आराधना होती है। इसकी आधारशिला अति निःस्पृह ब्रज-रसिक संत श्रद्धेय श्रीरमेशबाबाजी महाराज ने संस्थापित की है, जिन्होंने ६५ वर्ष पूर्व निर्जन खण्डहर स्वरूपमय बन चुके 'चोर-डाकुओं और विषैले सर्पों व भूत-प्रतों का आश्रय स्थल' मानगढ़ (श्रीराधामानबिहारीलाल की मानलीला-भूमि) को इसी नृत्य-गानमय संकीर्तन-आराधना द्वारा इसके मंगलमय मूल स्वरूप में पुनः लाकर ब्रज-सेवा और रसोपासना के केन्द्र के रूप में स्थापित कर दिया। इन्हीं दिव्य महापुरुष द्वारा मानगढ़ में आरम्भ की गयी इस रसोपासना ने विशाल स्वरूप ग्रहण कर लिया और श्रीजी के कर-कमलों से निर्मित उनकी नित्य विहार स्थली गह्वरवन में आज भी जो नित्य रास होता है, जिसके दर्शनाधिकारी तो केवल विशुद्ध भक्तजन ही हैं, सर्वसाधारणजनों को भी उस नित्यरासलीला की एक झलक मिल सके, इसी उद्देश्य से गह्वरवन के ही आराधना-भवन रसमण्डप में श्रीबाबामहाराज के द्वारा इस रसमयी नृत्याराधना का शुभारम्भ किया गया । पूज्य महाराजश्री प्रतिदिन अधिकांशतया निरंकुश अति निडर, भीषण कलिकाल में गोपिका सदृश्य प्रेमभाव को प्रदर्शित करने वाली कृष्णाराधिका श्रीमीरा जी के पदों का गायन करते हैं, उनके पदों में निहित गूढ़ प्रेमाभक्ति के सिद्धान्तों की व्याख्या करते हैं और मीरा जी के दिव्य चरित्र को इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं कि उनके उद्बोधन से मानगढ़ की सौ से अधिक दिव्य आराधिकाएँ श्रीमीराजी की काल व्याल को परास्त कर देने वाली विलक्षण नृत्यमयीआराधना का अनुकरण करते हुए डेढ़ घण्टे तक लगातार कृष्णप्रेम की उन्मुक्त तरंगों से आवेशित होकर रसमंडप में विराजित अपने इष्टदेव **'श्री अक्षय युगल'** (श्रीराधामाधव युगल सरकार) को रिझाने के लिए संगीतमय नृत्य-गान करती हैं; यह नृत्य प्रभु को प्रसन्न करने हेतु की जाने वाली एक दिव्य आराधना है। कुछ लोग भक्ति-शास्त्र समर्थित और भगवान् के प्रेमी विशुद्ध भक्तों द्वारा आचरण में लायी गयी इस नृत्य-आराधना का मर्म न समझ पाने के कारण व्यर्थ ही इसकी आलोचना करने का महद्-अपराध, भक्तापराध कर बैठते हैं और बड़े आश्चर्य की बात है कि ऐसे लोगों में कुछ अध्यात्म-जगत के, वैष्णव सम्प्रदायों के अनुयायीजन भी होते हैं, उनको केवल यही प्रतीत होता है कि यहाँ तो लड़कियाँ नृत्य कर रही हैं और समझते हैं कि यह कृत्य, इसका दर्शन, शास्त्र और साधु-वैष्णवों की मर्यादा के विरुद्ध है, जबकि वे भूल जाते हैं कि कृष्ण-दिवानी श्रीमीराबाईजी इसी कलिकाल में साधु-संतों के समक्ष लोकलाज और राजकुल की मर्यादा का पूर्णतया उल्लंघन कर लोकबाह्य होकर नृत्य किया करती थीं, भक्तमाल के अनुसार जिनकी अनन्य कृष्ण-भक्ति को देखकर वृन्दावन में संत-समाज के कुल-दीपक श्रीजीवगोस्वामीजी,जिन्होंने श्री चैतन्य महाप्रभु के सिद्धांत का अनुसरण करते हुए स्त्री-दर्शन न करने का प्रण ले रखा था, श्रीमीराजी की वाणी सुनकर अपने इस प्रण का त्याग कर दिया और उनके चरणों में नत मस्तक हो गये | मीराजी ने अपने पद में भी इसकी महिमा गायी है - **मीरा श्री गिरधरन लाल सों भक्ति रसीली जाँची। गाय-गाय हरि के गुण निशदिन काल व्याल सों बाँची ॥** वह कहती हैं कि मैने अपने गिरधर लाल से इसी रसीली भक्ति (नृत्य-गान) को माँगा था और उन्होंने उसे मुझे दिया। अब मैं दिन-रात हरि के गुण गाकर और नृत्य कर कालरूपी सर्प से बच गयी हूँ। भक्तमाल में गोस्वामी नाभाजी ने मीराजी के चरित्र की मुक्तकण्ठ से सराहना की है। **'लोक लाज कुल श्रृंखला तजि मीरा गिरधर भजी,** इसी नृत्य-गान रूपी सरस आराधना के बल पर विष

अमृत बन गया, भयंकर सर्प शालिग्राम बन गये । रसमण्डप भवन में प्रतिदिन होने वाली संकीर्तन आराधना भी मीराजी की शैली में ऐसी साध्वियों द्वारा की जाती है जो लोकलाज और परिवार की बेड़ियों का उन्मूलन कर सर्वत्याग के विशुद्ध मार्ग पर चल रहीं हैं। त्रिविध एषणाओं (धन, मान-प्रतिष्ठा और भोग) से मुक्त होकर ये देवियाँ विशुद्ध भागवत धर्म का अनुसरण कर रही हैं। इनके द्वारा प्रभातफेरी सम्मेलनों के माध्यम से ३० हजार से अधिक गाँवों में संकीर्तन प्रभातफेरियों का प्रचार किया गया है, प्रभात की ब्रह्मबेला में ही ये देवियाँ प्रतिदिन श्रीजी की मंगला आरती में सम्मिलित होकर बरसाने की प्रभातफेरी में जाती हैं, अपने निवास स्थल रसकुंज में अखण्ड संकीर्तन के माध्यम से अहर्निश नाम संकीर्तन करती हैं, इसके अतिरिक्त भी अन्य विविध भक्तिमय सेवा कार्यों में संलग्न रहकर ये जगत के मायिक प्रपंच से सर्वथा दूर रहती हैं। मीरा जी की तरह इन विशुद्ध भक्ताओं को भी समाज द्वारा की गयी बदनामी का विषपान करना पड़ा, यहाँ तक कि प्रशासन द्वारा भी इनके चरित्र पर आक्षेप लगाते हुए इनके आवास स्थल 'रसकुंज' की विशाल इमारत को नष्ट करने के आदेश दिये गये परन्तु मीरा जी की तरह कोई भी इनका बाल भी बाँका न कर सका। प्रशासनिक आदेश धरे रह गये और रसकुन्ज की एक ईंट भी कोई नहीं उखाड़ सका और ये संसार की समस्त विघ्न-बाधाओं से परे रहकर अपनी संकीर्तन-आराधना में निमग्न रहीं। आज इनकी यह विश्वमंगलकारी नृत्याराधना विश्व-विख्यात हो गयी है । जो समाज कभी इनकी व इनकी रसोपासना का उपहास करता था, इन पर ताने मारता था और शास्त्र-वैष्णव मर्यादा का घोर उल्लंघन मानता था, वर्तमान में इनकी इस आराधना को श्रद्धालु भक्त 'रास' के नाम से पुकारते हैं और प्रतिदिन इसका दर्शन करने के लिए दूर-दूर से, देश-विदेश से भक्तगण बसों और अन्य वाहनों के माध्यम से गहवरवन आते हैं और इन गोपिका स्वरूपा आराधिकाओं के प्रति नतमस्तक होकर श्रद्धा से इन्हें साष्टांग वन्दन करते हैं। पद्म पुराण में श्री भगवान् का देवर्षि नारद के प्रति यह उद्घोष है-

नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च ।
मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद ॥

न तो मैं वैकुण्ठ में रहता हूँ और न ही योगियों के हृदय में, मेरे भक्त जिस स्थान पर गायन और नृत्य करते हैं, वहीं मैं अपना आसन जमा लेता हूँ। अतः मानमन्दिर की गोपी भाव भावित दिव्य साधिकाओं द्वारा अगणित विघ्न-बाधाओं को शान्त भाव से सहन करते हुए गहवरवन में कई वर्षों तक श्री बाबा महाराज के नेतृत्व में संकीर्तन नृत्याराधना की गयी, उसके परिणामस्वरूप रसमण्डप के विशाल आराधना भवन में चमत्कारिक रूप से युगल सरकार 'श्री अक्षय युगल' जी का प्राकट्य हुआ। जिस प्रकार महर्षि शाण्डिल्य जी की प्रेरणा से श्रीकृष्ण प्रपौत्र वज्रनाभ जी द्वारा गोविन्द देव, बलदेव, हरदेव, केशवदेव तथा मदनमोहनजी, गोपीनाथजी आदि के श्री विग्रहों की स्थापना हुई, कालान्तर में कलियुग में भूमिस्थ हो जाने पर भगवत्स्वरूप आचार्यों द्वारा इन्हें पुनः प्रकट किया गया तथा अन्य आचार्यों द्वारा भी ब्रजभूमि में जिन भगवद्-विग्रहों का प्राकट्य हुआ, उसी प्रकार गहवरवन में कई वर्षों से श्रीबाबामहाराज और मानगढ़ की गोपिकाओं की विलक्षण रसोपासना से प्रसन्न होकर सहज में बिना किसी प्रयत्न के ही श्रीराधामाधव युगल सरकार के रूप में दिव्य श्री विग्रह का प्राकट्य हुआ। श्रीबाबामहाराज ने इनका नामकरण किया है - **'श्री अक्षय युगल'** | वर्तमान में रसमण्डप के विशाल मंच पर ये युगल विग्रह 'श्रीअक्षय युगलजी' के स्वरूप में विराजमान हैं और प्रतिदिन की सायंकालीन इस दिव्य आराधना का दर्शन कर वे स्वयं परम आनंदित होते हैं तथा अपनी आराधिकाओं पर कृपा-वृष्टि करते हुए इस आराधना में सम्मिलित होने वाले सभी श्रद्धालुओं को अपनी त्रिभुवनमोहिनी अलौकिक रूप माधुरी का रसास्वादन कराते हुए इस रास नृत्य के माध्यम से नित्यलीला स्थली में सम्पन्न होने वाले नित्य रास में ले चलने का वरदान भी दे रहे हैं |

श्रीसद्गुरुदेव एवं उनका स्वरूप

(संकलनकर्त्री / लेखिका –साध्वी गौरीजी, मान मन्दिर, बरसाना)

"गुं रौति इति गुरुः" जो अंधकार को नष्ट कर सके, वही हैं सच्चे श्रीगुरुदेव | आजकल कलिकाल के मल ने सभी को घोर तम की ओर अग्रसर कर दिया है | ऐसी स्थिति में गुरुकुलों की परम्परा का निर्वहण असम्भव सा रह गया है, यद्यपि भारतवर्ष में अथवा विदेशों में भी बहुत सारे गुरुकुल चल रहे हैं | गुरुकुल कोई एक शिक्षा-पद्धति मात्र नहीं है कि निश्चित पाठ्यक्रम- ज्ञान के उपरान्त शिष्य उचित शिष्यत्व को प्राप्त हो जाय | बहुधा अंधा अन्धे का गुरु बन जाता है और फिर परिणाम अनन्तकाल तक गर्त में गिरना ही होता है |

गुर सिष बधिर अंध का लेखा | एक न सुनइ एक नहिं देखा ||

(रामचरितमानस, उत्तरकाण्ड -९९)

समस्त कामनाओं से शून्य होकर केवल आत्मदर्शन का लक्ष्य जिनके पास है, वही महापुरुष शिष्यों को आत्मसदृश्य तैयार कर सकते हैं | हमारी सुदृढ़ ऋषि-परम्परा इसी आधार पर बनी थी | देवगुरु ब्रहस्पति के पुत्र कच ने संजीवनी विद्या तो प्राप्त किया गुरु से परन्तु अपने ऊपर आसक्त गुरु-पुत्री के प्रबल अनुरोध को इन्होंने स्वीकार नहीं किया चाहे इसके लिए कितनी ही बार जीवन-समाप्ति जैसे कष्टों को ही क्यों न सहना पड़ा | ऐसे अनेक आदर्श हैं जो इस परम्परा के उत्कर्ष को अभिव्यक्त करते हैं | **"सा विद्या या विमुक्तये"** विद्या वही है जो हमें अनादिकाल के जन्म-मरण की कठोरतम यातनाओं से बचा सके | श्रीनारदजी ने कहा है –

"यत्सा विद्या तन्मतिर्यया" (श्रीमद्भागवत ४/२९/४९)

वास्तविक विद्या वही है, जिससे भगवान् में बुद्धि लग जाए | इसलिए जिस प्रकार भगवान् के चरणों की शरण मिल जाए, वही मार्ग उचित है | इसके बाद प्रश्न है कि गुरु सही है अथवा गलत है, इसकी पहचान क्या है ? तो नारद जी ने बताया –

स वै प्रियतमश्चात्मा यतो न भयमण्वपि |
इति वेद स वै विद्वान् यो विद्वान् स गुरुर्हरिः ॥

(श्रीमद्भागवत ४/२९/५१)

गुरु शिक्षित है अथवा अशिक्षित है, इसका कोई महत्व नहीं है | गुरु वही है जो केवल इतना जानता है कि भगवान् ही प्रियतम है और उसके रास्ते पर चलने में कोई भय नहीं है, जो यह जानता है वही सच्चा विद्वान् है तथा वही वास्तविक गुरु व भगवान् है | हम लोग गुरु नहीं हो सकते क्योंकि हम भगवान् को प्रियतम नहीं मानते हैं, धन और भोग को प्रियतम मानते हैं | गुरु तो वही है जो केवल भगवान् को प्रियतम मानता है क्योंकि वहाँ कोई भय नहीं है | धन और भोग में भय है | नारदजी ने गुरु चुनने का लक्षण बता दिया, गुरु सही है या गलत इसकी पहचान भी हो गयी |

जो गुरु करै शिष्य की आस | स्याम भजन ते भया उदास ||

श्रीभक्तमालजी में एक दोहा है –

गुरु जी लड़ें मुकदमा चेला जोतैं खेत |
भजन भाव जानैं नहीं पैसन ही सौं हेत ||

ऐसे लोग गुरु नहीं हो सकते, ऐसे लोगों को गुरु बनाने का मतलब है - पत्थर की नाव पर सवार होकर समुद्र पार करना | एक प्रश्न है कि क्या गुरु आवश्यक है, क्या प्राचीन संतों की वाणियों का आश्रय लेने से भगवान् नहीं मिल सकते ? भागवत में इस प्रश्न का उत्तर दिया गया है कि जब तक तुमको कोई अच्छा गुरु नहीं मिलता है, तब तक तुम भगवान् को गुरु मान सकते हो, यद्यपि इसका वर्तमानकालीन गुरु लोग खण्डन करते हैं और कहते हैं कि गुरु करना आवश्यक है, उनका कहना भी उचित है परन्तु शास्त्र ये भी कहता है कि तुम भगवान् को भी गुरु मान सकते हो, इसका प्रमाण है भागवत का यह श्लोक -

न कर्हिचिन्मत्पराः शान्तरूपे नङ्क्ष्यन्ति नो
मेऽनिमिषो लेढि हेतिः ।
येषामहं प्रिय आत्मा सुतश्च
सखा गुरुः सुहृदो दैवमिष्टम् ॥ (भागवत ३/२५/३८)

स्वयं कपिल भगवान् ने कहा है कि जो मुझको ही सब कुछ मान लेता है, वह काल पर विजय प्राप्त कर लेता है | जो मेरा शांत रूप है, जो उसके परायण है (उसमें मन लग गया है जिसका), उसका नाश कभी नहीं हो सकता | और तो क्या, 'काल' जो मेरा चक्र है वह भी उसको नहीं चाट सकता, जिसका प्यारा मैं हूँ | हम जैसे लोगों को धन, भोग, स्त्री, पुत्र आदि प्यारे हैं तो हमलोग उस ऊँचाई पर नहीं पहुँच सकते जिसका भगवान् यहाँ वर्णन कर रहे हैं | भगवान् कहते हैं कि जिसका एकमात्र मैं ही प्यारा हूँ अर्थात उसका प्रेम संसार में इधर-उधर नहीं बँटा | मैं ही उसका आत्मा हूँ, मैं ही उसका बेटा हूँ, सखा भी मैं हूँ, उसका गुरु भी मैं हूँ, उसका सुहृद, दैव तथा इष्ट भी मैं ही हूँ | इस सत्य सिद्धांत का निरूपण स्वयं भगवान् ने किया है कि तुम उन्हें गुरु मान सकते हो क्योंकि वे स्वयं कह रहे हैं | अब जो भगवान् की भी बात न माने, उससे वाद-विवाद नहीं करना चाहिए | भगवान् ने रामायण में भी कहा है कि सर्वप्रथम मुझे ही गुरु मानो –

गुरु पितु मातु बंधु पति देवा | सब मोहि कहँ जानै दृढ़ सेवा ||
(रामचरितमानस, अरण्यकाण्ड-१६)

कोई नया आराधक है, उसका कोई गुरु नहीं हैं तो भगवान् कहते हैं कि गुरु मुझे मान लो, पिता, भाई और देवता भी मुझे मान लो, मुझे सब कुछ मान सकते हो | इसके बाद है – दृढ़ सेवा, मुझे सब कुछ मानने के बाद यदि मनुष्य सेवा अपने शरीर की तथा अपने स्त्री, बच्चों की कर रहा है तो यह ठीक नहीं है, सेवा केवल सेव्य (भगवान्) की होती है | यही बात महादेव भी कहते हैं –

उमा राम सम हित जग माहीं | गुरु पितु मातु बंधु प्रभु नाहीं ||
(रामचरितमानस, किष्किन्धाकाण्ड - १२)

हे पार्वती ! भगवान् के समान हित कोई नहीं कर सकता | भगवान् राम ने सुग्रीव को राज्य दिया, स्त्री दिया, साथ-साथ भक्ति भी प्रदान की | इसीलिए महादेवजी बोल उठे कि देखो, भगवान् के समान हित संसार मे कोई नहीं कर सकता, गुरु भी नहीं कर सकता **"गुरु पितु मातु बंधु प्रभु नाहीं ||"** न गुरु हित कर सकता है, न माँ कर सकती है, न पिता कर सकता है, न भाई कर सकता है और न स्वामी हित कर सकता है क्योंकि सबमें स्वार्थ होता है | गुरु में भी यह स्वार्थ होता है कि मेरा शिष्य मेरे ही पास रहे, मेरी ही सेवा करे | यहाँ तक कि गुरु नाराज होकर शिष्य को बहिष्कृत भी कर देता है, ये विकृतियाँ सम्प्रदायों में भी हैं, उनके विरुद्ध जाने पर वे अपने समाज से निकाल देंगें, बहिष्कृत कर देंगें |

सुर नर मुनि सब कै यह रीती | स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती ||
(रामचरितमानस, किष्किन्धाकाण्ड - १२)

इसी तरह भागवतजी के आठवें स्कन्ध में भी 'गुरु तत्व' के बारे में अधिक स्पष्ट वर्णन किया गया है | यहाँ पर हमारे जैसे स्वार्थी गुरुओं का खण्डन हो जाता है |

न यत्प्रसादायुतभागलेशमन्ये च देवा गुरवो जनाः स्वयम् ।
कर्तुं समेताः प्रभवन्ति पुंसस्तमीश्वरं त्वां शरणं प्रपद्ये ॥
(भागवत ८/२४/४९)

सत्यव्रतजी ने कहा है कि कृपा तो भगवान् करता है, उनकी कृपा का दस हजारवाँ हिस्सा भी संसार के सारे देवता और गुरु मिलकर नहीं कर सकते अर्थात् कहीं न कहीं स्वार्थ रहता ही है | ऐसी घटनायें प्रायः होती रहती हैं कि अमुक गुरु ने रुष्ट होकर अपने शिष्य का त्याग कर दिया, अपने सम्प्रदाय से निकाल दिया | प्रश्न है कि 'गुरु' शिष्य को निकालता क्यों है ? तो इसका उत्तर सत्यव्रतजी ने आगे के श्लोक में दिया है –

अचक्षुरन्धस्य यथाग्रणीः कृतस्तथा जनस्याविदुषोऽबुधो गुरुः ।
त्वमर्कदृक् सर्वदृशां समीक्षणो वृतो गुरुर्नः स्वगतिं बुभुत्सताम् ॥

प्रेम की राह पर हर कोई नहीं चल सकता। यह राह मोम के घोड़े पर चढ़कर आग में चलने के समान है। ये प्रेम की राह बड़ी टेढ़ी है, इस पर वासना वाले नहीं चल सकते। ये वासना या तो प्रेम को जला देगी या फिर ये प्रेम की आग समस्त वासनाओं को जला देगी।

संसार में प्रायः अन्धा अन्धे का गुरु बन जाता है | कोई अन्धा जा रहा था, उसने कहा कि कोई मुझे रास्ता बता दो, इतने में उसे एक दूसरा अन्धा मिला | वह बोला कि मैं तुम्हें रास्ता बताता हूँ, जबकि उसके चेहरे पर आँख का चिन्ह भी नहीं था लेकिन वह गुरु बन गया; अरे, उससे तो दूसरा अन्धा अच्छा है क्योंकि उसके चेहरे पर आँख का चिन्ह तो है | अधिकतर संसार में यही होता है कि हम जैसे आदमी गुरु बन जाते हैं, जो स्वयं मोहान्धकार में हैं और दूसरे को भी ले जाते हैं | इसीलिए सत्यव्रतजी कहते हैं कि ऐसे अन्धे गुरुओं को छोड़कर हम भगवान् को गुरु मानते हैं | इस संसार में नेत्र वाले को दृष्टि (देखने की शक्ति, प्रकाश) भी चाहिए क्योंकि बिना नेत्र-ज्योति के नेत्र वाला कैसे देखेगा ? इसलिए भगवान् ही प्रकाश हैं और भगवान् ही नेत्र हैं, उनको गुरु मानने के बाद फिर किसी अन्य गुरु से प्रकाश लेने की आवश्यकता नहीं है | इसलिए हम अपनी वास्तविक गति को जानने के लिए इन नकली गुरुओं (अज्ञान में अंधों) को छोड़कर आपको गुरु मानते हैं अर्थात् हमको अन्यत्र कहीं प्रकाश नहीं मिल सकता है क्योंकि समाज में विवेकहीन लोग अधिक हैं | ऐसी स्थिति में भगवान् को ही गुरु के रूप में वरण करना चाहिए, यह भागवत का प्रमाण है | इसलिए यदि भाव है तो भगवान् की प्राप्ति अवश्य होगी |

हरि ब्यापक सर्बत्र समाना | प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना ||

(श्रीरामचरितमानस, बालकाण्ड - १८५)

यदि भाव नहीं है तो साधु, गुरु आदि कुछ भी बन जाओ फिर भी कुछ नहीं होगा | दण्डकारण्य में लाखों ऋषि थे, गोस्वामी तुलसीदासजी ने वर्णन किया है – "मिलि मुनिवृन्द फिरत दण्डकवन, सो चरचौ न चलाई |" वनवास से अयोध्या लौटने पर भगवान् ने कभी भी अभिमानमय अंतःकरण वाले उन ऋषियों की चर्चा नहीं की |

बारम्बार गीध सबरी की, बरनत प्रीति सुहाई ||

(तुलसी-विनयपत्रिका - १६५)

जबकि मांसभोजी जटायु और अधम जाति भीलनी शबरी की बारम्बार चर्चा की क्योंकि इनमें विशुद्ध भाव (दैन्यमय, अहंशून्य भाव) था | इसीलिए सैकड़ों यज्ञ करने के बाद राजा प्राचीनबर्हि ने उन यज्ञों को कराने वाले गुरुओं का त्याग कर दिया और नारदजी को गुरु रूप में वरण किया | इससे शिक्षा मिलती है कि यदि वास्तविक गुरु मिल गया है तो नकली गुरु का त्याग कर दो, जब वे सद्गुरु (सच्चे गुरुदेव) ही भगवान् हैं तो फिर सन्देह का कोई प्रश्न ही नहीं है | आजकल तो 'विद्या' का तात्पर्य मात्र उदर-पोषण तक सीमित रह गया है, तभी तो -

मातु पिता बालकन्हि बोलावहिं | उदर भरै सोइ धर्म सिखावहिं ||

(रामचरितमानस, उत्तरकाण्ड - ९९)

यद्यपि यह कोई क्लिष्ट कर्म नहीं है, पशु भी यही किया करते हैं | एक बिल्ली अपने बच्चे को चूहे का शिकार करना सिखा देती है | धन-धान्य से सम्पन्न हो जाना, ऐश्वर्य की प्राप्ति कर लेना अथवा बहुत अधिक मान-सम्मान प्राप्त कर लेना किसी विद्या का अविधेय नहीं होता | हमलोग आज भौतिक जगत की चकाचौंध का अंधानुकरण कर रहे हैं और अपने को ही नहीं, जाने कितनों को नरक का रास्ता दिखा रहे हैं, हमारी कुल-परम्परा यह कभी नहीं रही है | जिस भारतभूमि में राम-कृष्ण अवतरित हुए, वहाँ भोग-विलासिता भरी नारकीयता हमें कलंकित करती है | इन सब परिस्थितियों के दिग्दर्शनोपरान्त ब्रज के परमविरक्त संत श्रद्धेय श्रीरमेशबाबाजी, जिन्होंने अपने गत ६५ वर्षों से निरन्तर गुरुकुलीय दृष्टि से ब्रजवासियों का मंगल चाहा, उन्होंने न केवल ब्रज के वन, सरोवर, दिव्य पर्वतों व यमुना महारानी तथा गौमाता के उत्कर्ष को कायम रखने अपितु अपने क्रियात्मक जीवन व वाणी से सभी को आप्लावित करते हुए दिव्य संस्कारों से संस्कारित किया |

तुम ब्रह्म रूप हो जाओगे पर मेरे रस रूप को नहीं जान पाओगे। ब्रह्म रस के आगे भी कोई रस है और वो है भक्ति रस। वो भक्ति रस राधारानी ही देने वाली हैं।

आध्यात्मिक-शिक्षा की संरक्षिका
गुरुकुल-प्रणाली

वेद, पुराण, इतिहास व समस्त शास्त्रों का आधार एवं साररूप परात्पर तत्व परब्रह्म परमेश्वर का साक्षात्कार कराने वाली पराविद्या को जानने का साधन थी - पुरातन समय में गुरुकुल-पद्धति | | युगदृष्टा ऋषियों की परम्परा थी ज्ञान का हस्तांतरण ताकि सनातन संस्कृति की अवधारणा कभी सर्वकालिक समाप्ति तक न पहुँच जाये और उसकी अक्षुण्णता के लिए अपने शिष्यों को जगत की प्रापंचिक स्थिति से दूर रखकर उन्हें समस्त विद्याओं में पारंगत बनाया जा सके | यही कारण था कि जीवनकाल को चार भागों में विभक्त किया गया | ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास | प्रारम्भिक काल के २५ वर्ष गुरुकुल में अध्ययन कर अपने जीवन के या सृष्टि के सूक्ष्म रहस्यों को जाना जा सके और जन्म का फल प्राप्त कर सके, साथ ही इस परम्परा को आगे ले जाया जा सके | गुरुकुल-परम्परा के बहुत से उदाहरण हैं जिन्होंने धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष आदि समस्त पुरुषार्थों को प्राप्त किया | आरुणी, उद्यालक आदि ने गुरु-कृपा व शिष्य-साधना का अनुपम उदाहरण रखा | प्राचीनकाल में भारत में विद्यार्थियों की शिक्षा तथा उनके जीवन के सर्वांगीण विकास हेतु गुरुकुलों की स्थापना की गयी | इन गुरुकुलों में विरक्त संत-महापुरुष निष्काम भाव से छात्रों को धार्मिक शास्त्रों की शिक्षा दिया करते थे | गुरुकुल का परिवेश भौतिकतावादी जीवन से पूर्णतया मुक्त सर्वथा आध्यात्मिक और त्यागमय था | सनातन धर्म की वर्णाश्रम धर्म व्यवस्था के अंतर्गत ५ से २५ वर्ष की आयु तक मानवजाति के लिए ब्रह्मचर्य युक्त आचरण के साथ गुरुकुल में विद्याध्ययन करना अनिवार्य था | गुरुकुल परम्परा का ही परिणाम था कि प्राचीन भारत में सर्वोच्च स्तर के राजाओं तथा गृहस्थ और विरक्त के रूप में आदर्श नागरिकों और महापुरुषों का प्रादुर्भाव हुआ | गुरुकुल-शिक्षा-प्रणाली के कारण ही भारत विश्व में बहुमुखी प्रतिभा का केंद्र बना रहा और भौतिक तथा आध्यात्मिक समस्त क्षेत्रों में विश्व का सर्वाधिक वैभवशाली और प्रगतिशील राष्ट्र बना रहा | परन्तु कलियुग के आगमन के उपरान्त जब से भारत विदेशी शक्तियों के शासन के आधीन रहा तब से गुरुकुल-परम्परा पर भीषण कुठाराघात किया गया | मुस्लिम आसुरी शासकों तथा उनके पश्चात् भारतीय संस्कृति के शत्रु अंग्रेज शासनाधिकारियों ने सनातन धर्म की इस बहुमूल्य संस्था पर भीषण प्रहार किया | गुरुकुल परम्परा को समूलतः नष्ट करने का कार्य अंग्रेजों के द्वारा ही किया गया | अंग्रेजों ने जब भारत को अपने आधीन किया तो उन्होंने भारतीय संस्कृति का गहन अध्ययन किया | गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति के कारण भारतीय संस्कृति की अलौकिकता व राष्ट्र की सर्वसमृद्धि को देखकर २ फरवरी सन् १८३५ को तत्कालीन अंग्रेज गवर्नर जनरल लॉर्ड मैकाले ने ब्रिटेन की संसद के समक्ष निम्नलिखित योजना प्रस्ताव प्रस्तुत किया –

"मैकाले ने कहा - मैं भारत के कोने-कोने में घूमा हूँ और मुझे यहाँ एक भी व्यक्ति ऐसा दिखाई नहीं दिया, जो भिखारी हो, चोर हो | इस देश में मैंने इतनी धन-दौलत देखी है, इतने ऊँचे चारित्रिक आदर्श और इतने गुणवान मनुष्य देखे हैं कि मैं नहीं समझता कि हम कभी इस देश को जीत पायेंगे, जब तक कि उसकी रीढ़ की हड्डी (आध्यात्मिक और सांस्कृतिक विरासत) को नहीं तोड़ देते हैं | इसलिए मैं प्रस्ताव रखता हूँ कि हम इसकी पुरातन शिक्षा-व्यवस्था (गुरुकुल-प्रणाली) और उसकी संस्कृति को बदल डालें, जिससे वे भारतीय सोचने लगेंगे कि जो भी विदेशी अंग्रेज हैं, वह हमसे अच्छे हैं और उनकी चीजें हमसे बेहतर हैं तो वे अपने आत्मगौरव व अपनी ही संस्कृति को भुलाने लगेगें और वैसे ही बन जायेगें, जैसे हम चाहते हैं - एक पूरी तरह से दमित देश |"

भारतीय रीढ़ की हड्डी उसकी आध्यात्मिक और सांस्कृतिक विरासत को बलवती बनाने वाली 'प्राचीन गुरुकुल शिक्षा प्रणाली' का समूल विनाश करने के उद्देश्य से मन के काले इस मैकाले के काले योजना प्रस्ताव को ब्रिटिश संसद द्वारा पूर्ण समर्थन मिल गया और फिर इसके स्थान पर पश्चिमी सभ्यता पर आधारित आधुनिक शिक्षा व्यवस्था भारतीय जनमानस पर कुटिल अंग्रेजों द्वारा थोपी गई और इसमें वे काफी हद तक सफल रहे | अंग्रेजों द्वारा भारत में लागू की गई इसी शिक्षा का परिणाम है कि भारत के लोग अपनी महान आध्यात्मिक संस्कृति से विमुख होते जा रहे हैं और निरन्तर उनका घोर आत्मपतन हो रहा है | वस्तुतः गुरुकुल-परम्परा ही भारतीय संस्कृति-सभ्यता का मूलाधार है | जो विश्वमंगलमूल विशुद्ध भगवद्भक्ति की शिक्षा देते हैं, वही विद्वान, गुरु व भगवान् हैं – (श्रीमद्भागवत ४/२९/५१) सद्गुरुजन ही भक्तिमय शिक्षा देते हैं और अगर शिक्षा-पद्धति ठीक है तो देश का कल्याण है | सच्चा गुरु ही देश का कल्याण कर सकता है | इसका प्रमाण हैं भगवान् राम-कृष्ण भी गुरुकुल के विद्यार्थी बने | भगवान् राम अपने भाइयों के साथ महर्षि वशिष्ठ के आश्रम में विद्याध्ययन हेतु गए |

गुरगृहँ गए पढ़न रघुराई | अलप काल बिद्या सब पाई ||

(रामचरितमानस, बालकाण्ड - २०४)

इसी प्रकार भगवान् कृष्ण भी अपने बड़े भाई बलरामजी के साथ उज्जैन में सांदीपनि मुनि के गुरुकुल में विद्याध्ययन के लिए गए | वहीं सुदामाजी के साथ उनकी मित्रता स्थापित हुई |

अथो गुरुकुले वासमिच्छन्तावुपजग्मतुः |
काश्यं सान्दीपनिं नाम ह्यवन्तीपुरवासिनम् ||

(भागवत १०/४५/३१)

गुरुकुल परम्परा इसीलिए है क्योंकि गुरुजनों के द्वारा जब भक्तिमय शिक्षा प्राप्त होती है तो वही देश और समाज का कल्याण करती है | प्रायः आज समाज भगवद्विमुख कराने वाली पाश्चात्य-सभ्यता से प्रभावित दुराचारी छात्रों के दूषण से दूषित होकर दुरत्यय मोहांधकार की ओर अग्रसर है, जहाँ से बाहर निकलना बिना सद्गुरु, संतजनों या भगवान् की कृपा के असंभव ही है | पश्चिमी सभ्यता प्रायः विषयसुख को ही परम प्राप्तव्य मानती है, जबकि हमारे सनातन धर्म की संस्कृति-सभ्यता 'तत्त्व-जिज्ञासा (भगवत्प्राप्ति की उत्कण्ठा) ही जीवमात्र का जीवनाधार परम लक्ष्य मानती है |

कामस्य नेन्द्रियप्रीतिर्लाभो जीवेत यावता |
जीवस्य तत्त्वजिज्ञासा नार्थो यश्चेह कर्मभिः ||

(भागवत १/२/१०)

जितनी भी विकृतियाँ हैं, वे सब वर्तमानकालीन छात्रों में पायी जाती हैं, उनका आचरण अशुद्ध होता है क्योंकि उनकी शिक्षा अशुद्ध है | शिक्षक के आचरण में यदि विकृतियाँ हैं तो शिक्षा दूषित हो जाती है | इसीलिए गुरुकुल-शिक्षा-प्रणाली देश के कल्याण में प्रमुख स्थान रखती है | अतः श्रीबाबामहाराज की सत्प्रेरणा से विद्यालयीय आधुनिक शिक्षा-व्यवस्था भी "रासेश्वरी विद्या मंदिर" के रूप में स्थापित कराई गयी, जिसमें प्रह्लाद सभा जैसे दिव्य कार्यक्रमों द्वारा लोक-परलोक दोनों को उज्जवल बनाने का प्रबल प्रयत्न रहा परन्तु सूक्ष्म जगत के सूक्ष्मातिसूक्ष्म रहस्यों को जानने वाले महापुरुष इससे संतुष्ट कैसे होते, उन्होंने कई बार पुरातन परम्परा को अपने यहाँ चलाने का संकल्प ही कर लिया | फिर जिन महापुरुष का प्रत्येक संकल्प अमोघ रहा हो, तो यह पूर्ण क्यों नहीं होता ? देश के विभिन्न राज्यों के बच्चे ईश्वर-इच्छा से स्वतः आने लगे | उन बच्चों में दिव्य संस्कारों का संप्रेषण इन अलौकिक दिव्य दृष्टा महापुरुष की अहैतुकी कृपा से शनैः-शनैः होने लगा | मानमंदिर (गह्वरवन) के एक किनारे से इनकी आभा सम्पूर्ण ब्रज तक सूर्य-किरणों की भाँति प्रकाशित होने लगी | प्रभात फेरी में संकीर्तन हो या फिर वैदिक अध्यात्म जगत में प्रवेश | इस सबसे वातावरण दूर-दूर तक सुगन्धित होने लगा | यही कारण रहा आज श्रीमानमंदिर पर दिव्य "दीदी जी गुरुकुल" की स्थापना हुई | यह गुरुकुल यद्यपि भौतिकवादियों को भले ही आकर्षित नहीं कर पाये परन्तु

इसके दूरगामी परिणाम सुखद होंगे | व्यक्ति के जीवन में सङ्ग का विशेष महत्त्व होता है | अजामिल जैसे धर्मात्मा पण्डित को कुसंग महापापी बना सकता है तो फिर इस कलिकाल के भयानक ताण्डव से कौन बच पायेगा | कलिमल को भी शमन करने की सामर्थ्य महापुरुषों में या उनके संकल्प में होती है | आज के यही बच्चे आगे चलकर जगत के लिए बड़े ही कल्याणकारी सिद्ध होंगे | गीता, भागवत, रामायण, महाभारत, वेद, पुराण के पठन-पाठन में निरन्तर निमग्न बच्चों का जीवन अलौकिक बनता जा रहा है | वास्तव में आज इस पुरानी गुरुकुल-परम्परा की महती आवश्यकता है | हमारे समस्त संस्कारों का परिमार्जन इसी से सम्भव है | प्राचीन भारत में तक्षशिला और नालन्दा के विश्वविद्यालयों की ख्याति पूरे विश्व में थी | तक्षशिला विश्वविद्यालय में चाणक्य और चन्द्रगुप्त मौर्य जैसी विलक्षण विभूतियों ने शिक्षा प्राप्त की | अनन्तर चाणक्य इसी विश्वविद्यालय के प्रसिद्ध शिक्षक भी बने | भारत को प्रगतिशील बनाने में तक्षशिला के इन दोनों गुरु-शिष्य का बहुत बड़ा योगदान रहा है | तक्षशिला में दस हजार विद्यार्थी अध्ययन करते थे और उन्हें नि:शुल्क शिक्षा प्रदान की जाती थी | इसलिए वास्तविक गुरु की आवश्यकता सदा से रही है परन्तु जब तक सच्चे त्यागी महापुरुष की प्राप्ति न हो, भगवान् को अथवा प्राचीन संत – महापुरुषों को गुरु मानकर सच्ची श्रद्धा व विश्वासपूर्वक उनकी वाणी, उनके द्वारा रचित ग्रंथों का अध्ययन कर भवसागर को पार कर दिव्य धाम-धामी की प्राप्ति की जा सकती है |

बरसाना में रस आया, श्री राधारानी के चरणों से।

वृन्दावन में रस कहाँ से आया? वृन्दावन में रस आया बरसाना से। बरसाना में रस कहाँ से आया? बरसाना में रस आया, श्री राधारानी के चरणों से। ये सभी जानते हैं कि राधारानी का गाँव बरसाना है, जहाँ आने के लिए श्रीकृष्ण भी तरसा करते हैं। बहुत लोग इस बात को नहीं समझ पाते हैं। जो सबसे प्रधान श्री राधारानी जी का ग्रन्थ राधारससुधानिधि है, उसमें सबसे पहले इस बरसाना की ही वंदना की गयी है।

यस्या: कदापि.....वृषभानुभुवो दिशेऽपि ॥

श्रीमाताजी गौशाला में एक विशालतम 'गौ-चिकित्सालय' का शिलान्यास

(संकलन/लेखन - श्रीध्रुवदासजी, मानमन्दिर)

पूज्य श्रीबाबामहाराज ने १४ जुलाई २०१८ को मानमन्दिर, बरसाना की श्रीमाताजी गौशाला में बीमार गौवंश के उपचार हेतु एक विशाल गौ-चिकित्सालय का शिलान्यास किया | इसके निर्माण कार्य में प्रमुख योगदान परम गौ-भक्त श्रीमहावीरजी का है | इस शुभ कार्य के अवसर पर 'श्रीमाताजी गौशाला' के प्रबंधक संत श्रीब्रजशरण जी, श्रीमहावीरजी और उनके सहयोगी गौ-भक्त, मानमन्दिर सेवा संस्थान के व्यवस्थापक श्रीराधाकांत शास्त्री जी और गौशाला के सेवकगण तथा गौ-प्रेमी संत-भक्त उपस्थित थे | श्रीमहावीरजी के साथ एक ऐसे गौभक्त श्रीदिनेशजी का भी वहाँ आगमन हुआ, जो गौ-महिमा पर ही विस्तृत शोधकार्य कर रहे हैं और उन्होंने बताया कि मेरे शोधकार्य का प्रमुख विषय है कि 'मनुष्य गाय का पालन नहीं करता है बल्कि गाय ही मनुष्य का पालन-पोषण करती है |'

इस मांगलिक अवसर पर पूज्य बाबाश्री ने उपस्थित समस्त गौभक्तों को इस प्रकार गौ-महिमा से अवगत कराया – "मानमन्दिर की श्रीमाताजी गौशाला के निर्माण के पीछे एक विलक्षण चमत्कार है और इस वर्ष बरसाने की रंगीली होली के दर्शन हेतु पधारे उत्तरप्रदेश के परम गौ-भक्त मुख्यमंत्री श्रीआदित्यनाथ योगीजी का जब इस गौशाला में आगमन हुआ तो भरी सभा के बीच में मैंने उनसे कहा था कि गौशाला स्थापना का मेरा कोई लक्ष्य नहीं था, हम तो भिक्षा माँगने वाले साधु हैं | हमारे यहाँ मानमन्दिर पर साधु-संतों, साध्वियों और दीदी जी गुरुकुल के विद्यार्थियों का विशाल समुदाय है, ये सभी ब्रजवासियों की मधुकरी का शुद्ध अन्न खाते हैं | मैं जब ६५ वर्ष पूर्व ब्रज में आया था तो चारों ओर ब्रज की दुर्दशा ही देखी | श्रीराधामाधव की रसमयी लीलाओं से जुड़े वन-पर्वत, कुण्ड-सरोवर आदि नष्ट हो रहे थे, कोसी में गोमती गंगा नष्ट हो गयी थी, यमुनाजी का अत्यंत प्रदूषित, विकृत स्वरूप था, ये सब देखकर दुःख होता था |

लेकिन उस समय कुछ कर नहीं सकते थे | कुछ समय बाद श्रीजी की कृपा से मानगढ़ पर हमारे साथ कीर्तन करने वाले कुछ ब्रजवासियों (जो बिना कहे ही हमारे साथ सेवा करने के लिए चल देते थे) के सहयोग से गह्वरवन में राधासरोवर (गह्वरवन-कुण्ड) की सफाई हुई | हम लोग दिन भर बाल्टियों से कुण्ड का दूषित जल और कीचड़ बाहर निकालते थे क्योंकि इसे बाहर निकालने का उस समय कोई अन्य साधन नहीं था | गह्वरकुण्ड के शोधन के बाद मानमन्दिर के द्वारा ब्रज के बहुत से कुण्डों का जीर्णोद्धार नाम-संकीर्तन की शक्ति से हुआ | कोसी में 'गोमती गंगा' का केवल नाम मात्र ही रह गया था, वास्तव में वह तो गटरगंगा बन चुकी थी, वहाँ के कुछ ब्रजवासियों ने सहयोग दिया और इस प्रकार गोमती गंगा का शोधन हुआ | संक्षेप में ही मैं बता रहा हूँ कि इस तरह से ब्रज के अनेकों कुण्डों का परिष्कार (पुनरुद्धार) हुआ | मानमन्दिर सेवा संस्थान के इस उत्साह को देखकर एक ऐसी लहर चली कि कई संस्थायें ब्रज की सेवा हेतु दौड़ पडीं | जैसे - कुछ संस्थायें मुम्बई में हैं, कुछ देशव्यापी हैं, श्रीविनीतनारायणजी हैं, इस संदर्भ में गोलोकवासी श्रीजी बाबा का नाम भी उल्लेखनीय है; मानगढ़ से इन सभी को बहुत प्रेरणा मिली और ये सब ब्रज के विषय में सेवा हेतु निष्ठा के साथ संलग्न हो गये | साहस बढ़ता गया, यमुना जी के विषय में भी आन्दोलन प्रारम्भ किये गये किन्तु अभी हम पूर्णतया सफल नहीं हैं, यमुना आन्दोलन के

कारण देश में जाग्रति अवश्य हुई है परन्तु पूर्ण सफलता अभी उपलब्ध नहीं हो सकी है | पूर्ण सफल हम तभी होंगे जब यमुना जी का निर्मल जल ब्रज में आ जायेगा | इन सब कार्यों के अतिरिक्त सामर्थ्य न होने पर भी हमलोग ब्रजचौरासी कोस की यात्रा उठाते रहे | पहली ब्रजयात्रा में लगभग दो सौ आदमी थे फिर संख्या बढ़ते-बढ़ते अब पन्द्रह हजार तक पहुँच गयी है; संकल्प यही था कि धर्म को कभी व्यापार नहीं बनायेंगे | मानमन्दिर द्वारा बहुत से कार्य हुए लेकिन कहीं से भी चन्दा नहीं लिया गया, यहाँ तक कि गौशाला में पचास हजार से अधिक गायें हैं, बीस लाख रुपये प्रतिदिन का खर्चा है लेकिन आज तक किसी से धन की याचना नहीं की गयी | केवल प्रभु ही निर्वाह करता है | वस्तुतः गौशाला निर्माण करने का मेरा कोई लक्ष्य नहीं था, मानमन्दिर द्वारा संचालित 'श्रीराधारानी ब्रजयात्रा' के बरसाना पड़ाव के दौरान प्रतिवर्ष मैं यात्रियों से 'श्रीबरसाना धाम' को प्रणाम करने का शास्त्रोल्लिखित एक मन्त्रोच्चारण करवाया करता था परन्तु वास्तविकता यह है कि उस मन्त्र को मैं बिना निष्ठा के ही यात्रियों से बुलवाता था क्योंकि निष्ठा तो एक बहुत बड़ी चीज है | "झुठ-मुठ खेले साँचो होय, साँचो खेले बिरला कोय |" झूठ-मूठ में ही प्रणाम-मन्त्र द्वारा यात्रियों से मैं बरसाने का पूजन कराता था और उसी के परिणामस्वरूप गौशाला की स्थापना हो गयी | यह गौशाला दोहनी कुण्ड के निकट स्थित है, जहाँ द्वापरयुग में श्रीराधारानी के पिता श्रीवृषभानु बाबा का गौ-खिरक था और जहाँ श्यामसुन्दर स्वयं आकर गायें दुहते थे | 'श्रीमाताजी गौशाला' का श्रीगणेश किये जाने पर केवल ४-५ गायें ही थीं, उस समय मैंने यहाँ के सेवकों से कहा था कि देखो भैया ! आज ४,५ गायें हैं, अगर तुम लोग श्रद्धा के साथ सेवा करोगे तो यह भारतवर्ष की ही नहीं बल्कि विश्व की एक बहुत बड़ी गौशाला बनेगी | सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि सेवा में ईमानदारी चाहिए | ईमानदारी के साथ सेवा करने का चमत्कार तुम स्वयं कुछ दिन में देखोगे कि तुम्हें किसी से माँगना नहीं पड़ेगा, जिसके गोबर में लक्ष्मी का निवास है, वह गौमाता तुम्हें सब कुछ देगी और सब कुछ दे रही है | इन लोगों ने पूर्ण निष्ठा के साथ सेवा की और आज इस सेवा का ही प्रताप है कि जो यहाँ इतना बड़ा गौ-चिकित्सालय बनने जा रहा है | इसी तरह से अगर सेवा चलती रही तो यह भारतवर्ष की ही नहीं अपितु विश्व की सबसे बड़ी गौशाला निश्चित बनेगी | पचास हजार गायें आ चुकी हैं, पिछले वर्ष मैंने कहा था कि इनकी संख्या एक लाख तक बढ़नी चाहिए | "नौ लख धेनु नंदबाबा के, नित नयो माखन होय | बड़ो नाम तेरो नन्दबाबा को, हँसी हमारी होय || माखन की चोरी छोड़ साँवरे, मैं समझाय रही तोय ||" अब यह गौशाला इतनी प्रगतिशील हो गयी है कि विश्व के बड़े-बड़े लोग इसे देखने आते हैं, यह सेवा का प्रताप है | संत ब्रजशरणजी जैसे कर्मठ और ईमानदार सेवक यहाँ गौवंश की सेवा हेतु सतत् कार्यरत हैं, जिनके बारे में अधिक मैं क्या कहूँ, यह सेवा का प्रत्यक्ष चमत्कार दिखाई पड़ रहा है | अगर ऐसे सेवक भविष्य में भी यहाँ स्थाई रूप से उपस्थित रहे तो यह गौशाला निश्चित ही विश्व में सबसे अग्रगणी हो जायेगी | मैं ब्रजयात्रियों से बरसाना को प्रणाम करने का जो मन्त्र प्रतिवर्ष बुलवाता था, वह यह है –

महीभानुसुतायैव कीर्तिदायै नमो नमः |
सर्वदा गोकुले वृद्धिं प्रयच्छ मम कांक्षिताम् ||

(ब्रजभक्ति-विलास)

"महीभान के पुत्र वृषभानुजी को नमस्कार है, रानी कीर्तिजी को नमस्कार है, वे हमको गौवंश में वृद्धि का आशीर्वाद दें, शक्ति दें |" यह मन्त्र मैं बिना श्रद्धा के प्रतिवर्ष बुलवाता था | उसी का चमत्कार था कि गौशाला का निर्माण हुआ और उसमें गायों की संख्या निरंतर बढ़ती गयी, अभी तो पचास हजार गायें हैं और जैसा कि संकल्प है, भविष्य में यह संख्या एक लाख तक पहुँच ही जायेगी | जो गौ-चिकित्सालय यहाँ बनने जा रहा है, केवल गौशाला ही नहीं अपितु इससे सम्पूर्ण देश का कल्याण होगा क्योंकि गौ-महिमा से जुड़ी महाभारत में वर्णित एक कथा इस परममंगलकारी पूर्वानुमान को पुष्ट करती है – एक बार

महर्षि च्यवन ने समुद्र के सबसे निचले तल में अगाध जल के भीतर, वायु और भोजन रहित वातावरण में १२ वर्षों तक कठोर तप किया | उस समय राजा नहुष का राज्य था, जो कि बड़े प्रतापी राजा हुए हैं, ये कालान्तर में इन्द्र भी बने थे और इन्द्र बनकर के फिर नीचे आये | एक बार मछुवारों ने समुद्र में जाल डालकर लाखों मछलियाँ पकडीं और उस जाल में च्यवन ऋषि भी आ गये, जब जाल को निकाला गया तो ऋषि को देखकर सारे देश में सभी को आश्चर्य हुआ कि ये समुद्र के नीचे कैसे बैठे रहे ? लोग उन्हें देखने के लिए आये, स्वयं राजा नहुष भी आये, उन्होंने देखा कि च्यवन ऋषि हैं, बड़े तेजस्वी हैं, १२ साल तक समुद्र में रहकर जिन्होंने तप किया है | नहुष ने हाथ जोड़कर ऋषि से क्षमा-प्रार्थना किया – "महाराज ! अब आप जाओ, अपनी तपस्या करो, इन मछुआरों के द्वारा मछलियों के धोखे में ही भूल से जाल में आपको पकड़ लिया गया |" महर्षि च्यवन ने कहा – "मैं ऐसे नहीं जाऊँगा, ये लाखों मछलियाँ मेरे साथ १२ वर्षों तक समुद्र में रहीं हैं, ये मेरी बहनें हैं, इनको छुड़ाये बिना मैं कैसे चला जाऊँगा ?" महर्षि की बात सुनकर राजा नहुष ने एक-एक मछली का मूल्य स्वर्ण मुहर लगा दिया और बोले कि अब तो आप जा सकते हैं | वह बोले – "अभी मैं नहीं जाऊँगा क्योंकि यह तो तुमने मछलियों का मूल्य लगाया है, मैं भी इन मछुआरों का शिकार हूँ, अतः मेरा भी मूल्य लगाओ |" नहुष ने कहा कि महाराज ! मैंने आपका मूल्य आधा राज्य लगा दिया क्योंकि सारे संसार में उनका राज्य था | च्यवन जी ने कहा – "मेरा मूल्य आधा राज्य भी नहीं हो सकता |" ऋषियों की भीड़ वहाँ जमा हो गयी, बड़े-बड़े तेजस्वी ऋषि आ गये और बहस होने लगी कि इनका मूल्य क्या है? कोई कुछ कहता था, कोई कुछ कहता था, इसका समुचित निर्णय नहीं हो पाया | अंत में एक दुबला-पतला ब्राह्मण निकल के आया और उसने पूछा – "यहाँ किस कारण इतनी भीड़ जमा है ?" वे ऋषिगण बोले कि महर्षि च्यवन के मूल्य का निर्णय नहीं हो पा रहा है | ब्राह्मण – "क्या निर्णय लिया |" ऋषिगण – "सम्पूर्ण राज्य, सम्पूर्ण राष्ट्र को इनके मूल्य के रूप में लगा दिया गया फिर भी ये कहते हैं कि यह मेरा मूल्य नहीं है | इससे अधिक मूल्य देने की राजा की सामर्थ्य भी नहीं है, अब क्या दिया जाये ?" ब्राह्मण बोला – "इनका मूल्य मैं दूँगा और च्यवन ऋषि को संतुष्ट कर दूँगा |" ऐसा कहकर उसने एक छोटी सी गाय लाकर च्यवन को दिया और कहा कि लो महाराज ! तुम्हारा मूल्य हो गया ? च्यवनजी हँस गए और बोले – "ये तो मुझसे अधिक हो गया |" तब नहुष जी आश्चर्य से बोले – "अरे ! आपसे अधिक हो गया ?" च्यवन ऋषि बोले – "हाँ राजा नहुष ! मुझसे ज्यादा मूल्य हो गया |" गौ-महिमा के सम्बन्ध में महर्षि च्यवन ने तब यह मन्त्र कहा-

निविष्टं गोकुलं यत्र श्वासं मुञ्चति निर्भयम् |
विराजयति तं देशं पापं चास्यापकर्षति ॥

(महाभारत, अनुशासनपर्व ५१/३२)

जिस देश में गौवंश निर्भय श्वास लेता है यानि उसे अत्याचार का, मारने-पीटने का कोई खतरा नहीं होता, वह देश सर्वोपरि हो जाता है और उस देश में रहने वाले समस्त पापों को गौमाता खींचकर विनष्ट कर देती है क्योंकि इसके मुख में शंकर का निवास है –

सर्वे देवाः स्थिताः देहे सर्वदेवमयी हि गौः |
पृष्ठे ब्रह्मा, गले विष्णु, मुखे रूद्र, प्रतिष्ठितः ||
मध्ये देव गणा सर्वे: रोम कूपे महर्षयः |
पुच्छे नागाः, खुराग्रेषु ये चाष्टौ कुल पर्वताः ||
मुत्रे गंगादयो नध्यो, नेत्रयोः शशि भास्करौ |
येन यस्या स्तनौ वेदा सा धेनू वर्दास्तु मे ||

गाय की पीठ पर तो ब्रह्माजी रहते हैं, गले में विष्णु भगवान् रहते हैं और मुख में शंकर भगवान् रहते हैं | जितने देवता हैं, वे सब गाय के मध्य भाग में रहते हैं | इसके रोमकूप में बड़े-बड़े महर्षि रहते हैं, गौ-मूत्र में गंगा आदि संसार की समस्त पवित्र नदियाँ रहती हैं | आठ पर्वत जो पृथ्वी को धारण करते हैं, वे गौमाता के खुर के अग्रभाग में रहते हैं | भगवान् शंकर 'गाय' के मुख में रहते हैं अतः वह सभी वस्तुओं का भक्षण कर लेती है और इसी तरह वह देश के

समस्त पापों का भी भक्षण कर उन्हें भस्मीभूत कर देती है | जिस देश में गाय की सच्ची सेवा होती है, उस सेवा के प्रभाव से देश का कल्याण होता है | जब मैंने सुना कि गौ-चिकित्सालय बनने जा रहा है तो विचार किया कि यह तो श्रीजी की इच्छा है, वे ही गौशाला को आगे बढ़ा रही हैं क्योंकि दुबला-पतला गौवंश, गौवंश नहीं है | इस सम्बन्ध में महाभारत में एक कथा है –

जब कौरवों ने जुआ में पांडवों को छल से जीत लिया था और उनसे कहा कि तुम लोग १२ वर्ष तक वनवास और पुनः १ वर्ष तक अज्ञातवास करो | तब पांडव लोग १२ साल तक जंगलों में भटकते रहे, एक वर्ष तक उन्होंने अज्ञात वास किया लेकिन कोई जान नहीं पाया कि वे कहाँ हैं क्योंकि वे गुप्त रूप से राजा विराट के यहाँ नौकर बनके रहे | कौन सोचता था कि एक दिन ये पांडव किसी के यहाँ नौकरी करेंगे | सालभर तक दुर्योधन ढूँढ़ता रहा लेकिन उनका कुछ पता नहीं लगा तो सोचने लग गया कि अज्ञातवास का समय पूरा हो रहा है, फिर पांडव आ जायेंगे तो उन्हें राज्य बाँटना पड़ेगा इसलिए इनका पता लगाना जरूरी है | कौरवों की गोष्ठी हुई तो उसमें निर्णय हुआ कि दादाजी (भीष्म पितामह) को पांडवों का पता होगा, उनसे जाकर के दुर्योधन पूछें क्योंकि वह कभी झूठ नहीं बोलते हैं, वह सत्यवादी हैं | दुर्योधन ने भीष्म पितामह के पास जाकर अत्यंत दीनता से पूछा – "दादा जी ! आपको अवश्य पता है कि पांडव कहाँ हैं, आपसे पांडव कुछ छिपा नहीं सकते |" (विदुरजी ने पाण्डवों से पहले ही कह दिया था कि सबको बताना पर भीष्मजी को मत बताना क्योंकि वह सत्यवादी हैं |) भीष्मजी बोले – "नहीं, मुझे उनका पता नहीं है |" दुर्योधन ने कहा कि आप अनुमान तो बता सकते हैं कि किस देश में पांडव हैं ? तब भीष्मजी बोले कि अनुमान बता सकता हूँ किन्तु उनका निश्चित ठिकाना तो नहीं जानता हूँ, उस समय उन्होंने एक श्लोक कहा –

गावश्च बहुलास्तत्र न कृशा न च दुर्बलाः ।
पयांसि दधिसर्पींषि रसवन्ति हितानि च ॥

(महाभारत, विराटपर्व २८/२२)

जिस देश में तुमको गायें अधिक दिखाई पड़ें, कैसी गायें, जो दुर्बल नहीं हैं, पुष्ट हैं तथा जिस देश में रसमय दूध, दही और घी उत्पन्न होता है, उस देश में भक्त रहते हैं और उसी देश में पांडव होंगे | तब विचार हुआ कि गायें कहाँ अधिक हैं तो पता चला कि राजा विराट के देश में गायें अधिक बढ़ गयी हैं | कौरवों ने गायों पर हमला बोल दिया कि गायों को छुड़ा लो, जबरन उन्हें ले चलो, यदि पांडव वहाँ होंगे तो गायों को बचाने के लिए अवश्य आयेंगे | संक्षेप में कथा इस प्रकार है कि जिन गायों को कौरव चोरी करके ले जा रहे थे, उनको पांडवों ने रोका और कर्ण आदि सबको हरा दिया, यहाँ तक कि उस युद्ध में भीष्म, द्रोण आदि परम वीर योद्धा भी पराजित हो गये, ऐसी गायों की महिमा है | यह कथा इसलिए बताई क्योंकि विराट नगर में जितनी भी गायें थीं, वे सब पुष्ट थीं | वहाँ दूध, दही और घी आदि सब रसमय होते थे | (अब गोरस रसीला-मीठा कहाँ से होगा, जब गायें मृतक के समान हो गयी हैं, उनका जीवित रहना भी मुश्किल हो गया है | ऐसी गौशालाएँ हैं, जहाँ गायों की केवल हड्डी मात्र ही दिखाई पड़ती है, ऐसे में वे बेचारी रसीला दूध, घी और मक्खन कहाँ से देंगी ?) गौ-महिमा का सर्वोच्च उदाहरण है - ब्रजभूमि | ब्रज में इतने कष्ट आये, ऐसे-ऐसे असुर आये जो देवताओं को जीत लेते थे, जैसे - अघासुर, बकासुर, शकटासुर, काकासुर आदि और इन सबको खेल-खेल में ही श्रीकृष्ण ने समाप्त कर दिया, यह गौवंश की महिमा थी कि ब्रज में कोई भी आपत्ति नहीं आई और ये धाम संरक्षित-संवर्द्धित होकर सर्वोच्च व सर्वलोकप्रिय बना रहा, इसका कारण था कि गौवंश की यहाँ अत्यधिक सेवा व संवृद्धि हुई और स्वयं भगवान् कृष्ण ने गाय की ऐसी सेवा किया कि उनके जैसा गौ-सेवक आज तक कोई नहीं हुआ | गोपियाँ कहती थीं –

चलसि यद् व्रजाच्चारयन् पशून् नलिनसुन्दरं नाथ ते पदम् ।
शिलतृणाङ्कुरैः सीदतीति नः कलिलतां मनः कान्त गच्छति ॥

(श्रीभागवतजी १०/३१/११)

'हे प्यारे श्यामसुन्दर ! तुम गायों को चराने के लिए ब्रज के काँटों-कंकड़ों और कँटीली तृण-घास में घूमते हो, इससे हमारी प्राण-रक्षा संशय में है |' इसी प्रकार गौचारण के लिए जाते समय यशोदा जी ने कहा कि लाला ! पन्हैया पहन जा, छतरी ले जा किन्तु गोपाल जी ने मना कर दिया और बोले –

गोपालनं स्वधर्म्मो नस्तास्तु निश्छत्र-पादुकाः ।
यथा गावस्तथा गोपास्तर्हि धर्म्मः सुनिर्म्मलः ॥

(गोविन्दलीलामृत, पंचम सर्ग – २८, २९)

"बिना पादुका पहने, बिना छतरी लगाये ही गौसेवा करनी चाहिए |" गौ-भक्ति के कारण गोविन्द ने ऐसा आदर्श रखा कि जो कहा उसे किया | जब तक वह ब्रज में रहे, गौसेवा करते रहे, कभी भी पादुका नहीं पहनी, छतरी नहीं लगायी, ऐसा सेवक आज तक सारे विश्व में नहीं हुआ | इसलिए उनका नाम 'गोपाल' हुआ | **"गाः पालयति इति गोपालः | गाः विन्दति इति गोविन्दः |"** गौ का पालन करने वाला केवल एक गोपाल हुआ है, गोविन्द हुआ है और आज तक कोई दूसरा नहीं हुआ है | इसलिए जब मैंने सुना कि यहाँ पर श्रीजी की कृपा से कुछ लोग गौ-चिकित्सालय बना रहे हैं और ब्रजशरणजी ने मुझे इसके शिलान्यास के लिए आने का अनुरोध किया तो मैंने कहा कि मैं अवश्य आऊँगा और आज जब यहाँ आया तो इसके निर्माणकर्ता महावीरजी से कहा कि बादल छाया कर रहे हैं, अधिक गर्मी होने पर भी आज शीतलता है, यह शुभ हो रहा है | कार्य के आरम्भ में शुभ हो रहा है, तुम्हारा कार्य पूर्ण होगा और इसलिए भी होगा क्योंकि माताजी गौशाला के जो सेवक हैं, वे सब बड़े सज्जन और ईमानदार हैं, इनकी ईमानदारी के कारण ही यहाँ गौवंश की संख्या पचास हजार हो गयी है और इसकी निरंतर संवृद्धि हो रही है | अगर इसी प्रकार की सुदृढ़ निष्ठा और कर्मठता के साथ ये लोग गौमाता की सेवा में सतत् संलग्न रहे तो एक लाख की संख्या भी कम है, पता नहीं गौवंश की संख्या कहाँ तक जाएगी | सारे विश्व में श्रीमाताजी गौशाला भारतवर्ष की कीर्ति बन जाएगी | गौ-चिकित्सालय के निर्माण में प्रमुख भूमिका निभाने वाले महावीरजी का जैसा नाम है, वैसा ही इनका काम भी है | महावीर आदमी ही गौ-सेवा जैसे महान कार्य को कर सकता है, इन पर प्रभु कृपा करे और सामर्थ्य दे, चिकित्सालय तो छोटी चीज है, गौवंश की सेवा में प्रगति हेतु और भी जो आवश्यक कार्य होने हैं, उनमें भी सेवा का सौभाग्य संप्राप्त हो |

निरपेक्षं मुनिं शान्तं.....पूयेयेत्यङ्घ्रिरेणुभिः ॥

(भा. ११/१४/१६)

तुम निरपेक्ष हो जाओ तो मैं तुम्हारे भी चरणों के पीछे घूमूँगा कि जिससे तुम्हारी चरणरज मेरे ऊपर पड़ जाय और मैं पवित्र हो जाऊँ। भगवान् तो रसिक हैं जो भक्तों के चरणों की रज के लिए उनके पीछे दौड़ते हैं। जब भगवान् भक्तों की चरणरज के लिये भक्तों के पीछे दौड़ते हैं तो राधारानी के चरण पकडें तो इसमें क्या आश्चर्य? श्रीजी के चरणों में क्या बात है? श्रीजी के चरणों की ये विशेषता है कि जो संसार में सबसे सुंदर चन्द्रमा है, वैसे एक नहीं, दो नहीं, हजार नहीं, लाख नहीं, करोड़ों चन्द्रमा श्रीजी के श्रीचरणों में जो नखमणि है, उनके ऊपर न्यौछावर कर दो।

श्रीकृष्ण-रसामृत

(ब्रज-संस्पर्श से नृत्यरत नवनवायमान भक्ति)

व्यासाचार्या साध्वी मुरलिकाजी (मानमन्दिरवासिनी, गह्वरवन, बरसाना)
द्वारा कथित 'श्रीमद्भागवत-कथा'(९/१/२०१४)

कथा कहने वाला भी यह लक्ष्य लेकर कथा कहे कि इस कथा-कथन से भगवान् प्रसन्न होंगे, श्रोता का कल्याण होगा, सुनने वाले को भगवत्प्राप्ति होगी और श्रोता भी इस लक्ष्य से कथा सुने कि हम कथा तो सुन रहे हैं किन्तु हमारा भगवच्चरणों में सुदृढ़ अनुराग (प्रेम) हो, यही लक्ष्य लेकर कथा सुननी चाहिए और कहनी चाहिए तब कथा-श्रवण और कथा-कथन का यथार्थ और पूर्ण लाभ मिलता है और यदि मन में थोड़ी भी कचाई रह गयी, हृदय में सूक्ष्म रूप से इधर-उधर की वासनाएँ रह गयीं तो फिर उतना लाभ नहीं मिलेगा जितना कि मिलना चाहिए | आजकल कथाओं से लाभ इसीलिए नहीं दिखाई नहीं पड़ रहा है, नारदजी महाराज ने पहले ही ये सब स्थितियाँ देख लीं, अब तो धीरे-धीरे ये स्थितियाँ बढ़ती ही जा रही हैं | इसलिए कथा वक्ता को भी सावधान हो जाना चाहिए और श्रोता को भी सावधान हो जाना चाहिए | जो कृष्णार्थी है वही कथा कहे और जो कृष्णार्थी है वही कथा सुने अर्थात् भगवत्प्रेम का लक्ष्य लेकर ही कथा को कहा-सुना जाये | नारद जी महाराज बोले – मुनीश्वरो ! तीर्थ-भ्रमण करते हुए मैंने सोचा कि अब ब्रजधाम में चलना चाहिए क्योंकि वहाँ भगवान् ने लीलायें की हैं और तो कहीं मन को शान्ति नहीं मिली, अतः मैं श्रीवृन्दावनधाम में आया, यमुनाजी के किनारे पहुँचा और जैसे ही यमुना तट पर पहुँचा, उसी समय वहाँ एक युवती को देखा, जो खिन्न मन से बैठी हुई थी, उसके सामने दो वृद्ध पुरुष अचेत अवस्था में पड़े हुए जोर-जोर से श्वास ले रहे थे | मैं जब उनके पास गया तो वह मुझे देखकर खड़ी हो गयी और हाथ जोड़कर बोली – 'हे महात्मन ! आप क्षण भर के लिए रुक जाइये, आपके दर्शन से मेरे मन को बहुत शान्ति मिल रही है |' नारदजी रुक गये, उन्होंने परिचय पूछा – "हे देवी ! तुम कौन हो?" युवती ने परिचय दिया कि मेरा नाम भक्ति है, ये दोनों ज्ञान, वैराग्य नामक मेरे पुत्र हैं | मैं द्रविण देश में उत्पन्न हुई, कर्नाटक में बढ़ी, महाराष्ट्र में सम्मानित हुई और गुजरात में बूढ़ी हो गयी, वहाँ वृद्धावस्था ने मेरी ऐसी स्थिति कर दी कि मेरा अंग-अंग खंडित कर दिया, वहाँ से भाग के जान बचाकर मैं ब्रज-वृन्दावन में आयी और जैसे ही ब्रजभूमि से मेरा स्पर्श हुआ, सम्पर्क हुआ तो इस धाम में आते ही मैं नवतरुणी, फिर से युवती हो गयी | ब्रजभूमि के इस असाधारण चमत्कार को सुनकर नारदजी को अत्यधिक प्रसन्नता हुई | भक्ति महारानी ने नारद जी से प्रार्थना की – "हे देवर्षे ! मेरे पुत्रों ज्ञान, वैराग्य का बुढ़ापा दूर करें, मैं माँ हूँ किन्तु युवती हूँ और बेटे बूढ़े हो गये, ये मेरे साथ कैसी विलक्षण विपरीतता है ? आप इसे दूर करें |" देवर्षि नारदजी महाराज ने भक्ति महारानी से कहा कि हे देवी ! 'ज्ञान-वैराग्य' लोगों के द्वारा उपेक्षित हो गये हैं, ज्ञान-वैराग्य का सेवन करने वाला कोई नहीं रहा | तुमको भी गुजरात में खंडित (बूढ़ी) कर दिया गया लेकिन तुम ब्रजभूमि के आश्रय से बच गयीं | नारदजी महाराज ने ब्रजभूमि के विषय में कहा –

वृन्दावनस्य संयोगात्पुनस्त्वं तरुणी नवा ।
धन्यं वृन्दावनं तेन भक्तिर्नृत्यति यत्र च ॥

(भागवत-माहात्म्य१/६१)

भक्ति भी जहाँ युवती बन गयी, वह वृन्दावनधाम धन्य है | हम लोग कहते हैं कि ब्रज में खूब भक्ति है, ब्रज में भक्ति नृत्य करती है तो जो भक्ति नृत्य करती है, इसमें भक्ति की महिमा नहीं है, इसमें तो ब्रजभूमि की महिमा है कि भक्ति महारानी को भी नृत्य करा देने वाला यही भगवद्धाम ब्रजमण्डल है | आज भी ब्रजभूमि में, आज भी इस वृन्दावन में, कैसा वृन्दावन, जो पञ्च योजनात्मक अर्थात् पांच योजन का है, वृन्दावन का मतलब केवल एक सीमित

शहर ही नहीं है, वृन्दावन में ही बरसाना है, वृन्दावन में ही श्रीगिरिराज जी हैं और वृन्दावन में ही श्रीगह्वरवन धाम है | आज भी श्रीजी की नित्य लीलास्थली श्रीगह्वरवनधाम में पूज्यबाबामहाराज के सानिध्य में, रासरसमय सत्संग (नृत्य-गानमयी आराधना) में भक्ति महारानी साक्षात् नृत्य करती है | ये धाम का ही प्रभाव है कि जो भक्ति को भी नचा देता है | भक्ति को यहाँ नृत्य करने के लिए विवश कर देती है यह श्रीकृष्णप्रेममयी ब्रजभूमि | श्रीमद्भागवतजी के दशम स्कन्ध में लिखा है –

वृन्दावनं गोवर्धनं यमुनापुलिनानि च ।
वीक्ष्यासीदुत्तमा प्रीती राममाधवयोर्नृप ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/११/३६)

गोकुल से जब राम-कृष्ण वृन्दावन आये हैं तो अपने आप उनके मन में प्रेम उत्पन्न हुआ | केवल भक्ति के हृदय में ही नहीं, कृष्ण-बलराम के हृदय में भी प्रेम उत्पन्न करने वाली यही ब्रजभूमि है, यही वृन्दावन धाम है, जो राम-कृष्ण के हृदय में भी प्रेम उत्पन्न कर देता है | जब यात्रा वृन्दावन जाया करती है तो पूज्य श्रीबाबामहाराज प्रतिवर्ष व्यासजी के इस पद का गायन किया करते हैं –

वृन्दावन की शोभा देखत मेरे नैन सिरात ।
कुञ्ज निकुंज पुंज सुख बरसत, हरषत सबके गात ॥
राधामोहन के निज मन्दिर, महाप्रलय नहिं जात ।
ब्रह्मा ते उपज्यो न अखंडित, कबहूँ नाहिं नसात ॥
फणि पर रवि तर नहिं विराट महँ, नहिं सन्ध्या नहिं प्रात ।
मायाकाल रहित नित नूतन, सदा फूल फल पात ॥
निर्गुण सगुण ब्रह्म ते न्यारो, विहरत सदा सुहात ।
'व्यास' विलास रास अद्भुत गति, निगम अगोचर बात ॥

निरन्तर जहाँ भक्ति महारानी का नृत्य होता है, वही वृन्दावन है | वृन्दावन में नित्य रस वृष्टि होती है, नित्य भक्ति महारानी नाचती हैं | भक्ति महारानी ने नारद जी से प्रश्न किया – "हे देवर्षे ! परीक्षित जी तो धर्मात्मा राजर्षि थे फिर उन्होंने कलियुग को क्यों नहीं भगाया, जब वह जानते थे कि कलियुग में दोष ही दोष हैं तो कलियुग को तो भगा देना चाहिए था |" नारद जी बोले – "हे देवी ! यद्यपि कलियुग में दोष ही दोष हैं लेकिन फिर भी परीक्षित जी ने कलिकाल में गुण का ही दर्शन किया | कलियुग में भी उन्होंने एक गुण देख लिया | जो महापुरुष होते हैं, वे सारग्राही होते हैं, सार-सार को ग्रहण कर लेते हैं और दोषों को छोड़ देते हैं, दोषों के ऊपर दृष्टि उनकी नहीं जाती |" भक्ति महारानी ने पूछा कि उन्होंने कलियुग में क्या गुण देख लिया ? नारद जी बोले कि कलियुग में वैसे तो अवगुण ही अवगुण हैं लेकिन सबसे बड़ा गुण यही है –

यत्फलं नास्ति तपसा न योगेन समाधिना ।
तत्फलं लभते सम्यक्कलौ केशवकीर्तनात् ॥

(श्रीमद्भागवतमाहात्म्य १/६८)

तपस्या, योग, समाधि आदि से जो लाभ नहीं मिल सकता और अगर मिल भी जाये तो इन सबका जो फल होता है, वही फल कलिकाल में मात्र भगवन्नाम-संकीर्तन करने से सम्यक् रूप से (भलीभाँति) मिल जाता है | ऐसा नहीं कि कम या ज्यादा हो गया हो, अन्य युगों में तपस्या, योग, समाधि आदि साधनों से जो फल मिलता था, वह पूरा का पूरा फल कलिकाल में केवल भगवन्नाम-संकीर्तन से ही मिल जाता है | इसलिए हे देवी ! तुम शोक क्यों कर रही हो ? तुम तो प्रभु की निज शक्ति हो, उनकी अपनी स्वरूप शक्ति हो | तुम्हारे बुलाने पर तो भगवान् नीच के घर में भी आ जाते हैं |

त्वं तु भक्तिः प्रिया तस्य सततं प्राणतोऽधिका |
त्वयाऽऽहूतस्तु भगवान् याति नीच गृहेष्वपि ||

(श्रीमद्भागवतमाहात्म्य २/३) क्रमशः...

जब भी प्रभु से प्रार्थना करो या बात करो तो इस प्रकार करो कि वह तुम्हारे सामने खड़े हैं। प्रभु तुम्हारे सामने खड़े हैं, इस बात का विश्वास रखो। जो भी बोलो, भाव के साथ बोलो। खुले मन से बोलो। प्रभु में डूबकर बोलो कि प्रभु तुम्हारी बात को सुन रहे हैं |

श्रीराधासुधानिधि

(सर्वसाधनसार 'श्रीकृष्णप्रेम')

श्रीबाबामहाराज के सत्संग (३/ ५/१९९८) से संग्रहीत

(संकलनकर्त्री / लेखिका –साध्वी चंद्रमुखीजी, मान मन्दिर, बरसाना)

श्रीकृष्ण की आज्ञा से सभी ग्वालबाल यज्ञ करने वाले ब्राह्मणों के यहाँ गये और जा करके उन्होंने भोजन माँगा किन्तु ब्राह्मणों ने मना कर दिया | उन्होंने ग्वालों से कहा – अरे, तुमको हम कैसे भोजन दे देंगे, तुम लोग गँवार-ग्वारिया, गाय चराने वाले हो, तुम यहाँ कैसे चले आये ? इस प्रकार फटकार लगने पर सबका मुँह उतर गया | (भोजन मत दो, लेकिन फटकारते क्यों हो, ये कौन-सा यज्ञ है, कटुक वचन बोलते हो जबकि हर प्राणी में भगवान् है |) ब्राह्मणों द्वारा भोजन न दिए जाने पर निराश होकर सभी गोपबालक अपने सखा कन्हैया के पास चले आये | उन्हें उदास देखकर कृष्ण बोले – "अरे ! क्या हुआ छोराओ?" ग्वालबाल बोले – "अरे भइया कन्हैया ! वहाँ तो बड़ी जोर से फटकार पड़ी, याते तो भैया हम न जाते, भूखे रहते तो अच्छा था |" ठाकुरजी बोले – "अरे प्रिय सखाओ ! घबड़ाओ नहीं, अब तुम वहाँ उनकी स्त्रियों के पास चले जाओ | ये विद्वान् अपने को बहुत बड़ा समझ बैठे हैं, उनसे तो उनकी स्त्रियाँ बहुत अच्छी हैं |" ग्वालबाल बोले – "अरे, वहाँ जाने पर तो हमारी खोपड़ी पर मूसल और पड़ेंगे, कन्हैया, तू तो ऐसे ही काम किया करता है |" श्रीकृष्ण बोले – "ऐसा नहीं होगा, मैं जो कुछ कह रहा हूँ, उसे मानो, उन ब्राह्मणों की स्त्रियाँ उनके विद्वान् पतियों से ज्यादा अच्छी हैं | उनके पास जाकर भोजन माँगो तो वे अवश्य दे देंगी |" ग्वालबाल कहने लगे कि ठीक बात है, हमारे कन्हैया का जादू गोपियों पर अधिक चलता है, इसलिए वहाँ चलना चाहिए | वैसे भी यज्ञ पत्नियों द्वारा बनाए गए सुस्वादु व्यंजनों की सुगंध दूर तक फ़ैल रही थी, उसकी महक से ग्वालवालों की जीभ लपलपा रही थी | श्रीकृष्ण के कहने से सभी गोपबालक उन ब्रजदेवियों के पास पहुँचे और बोले – "हे सौभाग्यवती देवियो ! श्रीकृष्ण और बलराम यहाँ से थोड़ी दूर गौचारण कर रहे हैं, उन्हें बहुत अधिक भूख लगी है, यदि आप चाहें तो उनके लिए कुछ भोज्य पदार्थ दे दीजिये |" यज्ञपत्नियों ने पूछा – "श्रीकृष्ण और बलराम कहाँ हैं ?" ग्वाल सखा बोले – "वे अशोकवन में हैं | तुमलोग हमें दे दो भोज्य सामग्री, हम उन्हें ले जाकर दे देंगे |" यज्ञपत्नियाँ बोलीं – "नहीं, हम स्वयं ले जाकर उन्हें देंगी |" ग्वालबाल आपस में कहने लगे – "अरे ! यहाँ तो कन्हैया का रंग जम गया, इनके पति विद्वान् ब्राह्मण होने पर भी पशुवत् अज्ञानी ही हैं, ये तो केवल यज्ञ में स्वाहा-स्वाहा करने में ही लगे हुए हैं, इनसे तो इनकी पत्नियाँ बहुत अच्छी हैं |" इधर यज्ञपत्नियाँ अत्यंत प्रेम के साथ अनेकों पात्रों में श्रीकृष्ण-बलराम के लिए छप्पन प्रकार की भोग सामग्रियाँ सजाकर चलने लगीं | गोपबालक आगे-आगे चलकर उन्हें अशोकवन का रास्ता बताने लगे, वे तो अत्यधिक आनंदित हो रहे थे | अशोकवन में पहुँचकर यज्ञदेवियों ने अतिशय प्रेम सहित श्रीकृष्ण और बलराम को भोजन कराया | यज्ञपत्नियों से भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा – "हे देवियो ! अब आप लोग मेरा दर्शन कर चुकीं, भोजन भी करा दिया, अब आप अपने घर पधारिये |" वे ब्राह्मण पत्नियाँ बोलीं – "हम लोग घर कैसे जायेगीं, जब यहाँ आ रहीं थीं तो हमारे पति हमें बहुत रोक रहे थे, उनके मना करने पर भी हम यहाँ चली आईं, अब घर वापस जायेगीं तो वे हम पर बहुत क्रोधित होंगे और हमें अपनायेंगे नहीं, इसलिए हम वहाँ नहीं जायेंगी |" उनकी बात सुनकर श्यामसुंदर बोले –

पतयो नाभ्यसूयेरन् पितृभ्रातृसुतादयः |
लोकाश्च वो मयोपेता देवा अप्यनुमन्वते ||

(श्रीभागवतजी १०/२३/३१)

"हे देवियो ! तुम्हारे पतियों की तो बात ही क्या है, तीनों लोकों के इन्द्रादि समस्त देवगण भी अब तुम्हारा सम्मान करेंगे क्योंकि तुमने मेरे पास आने का साहस किया है, मेरे लिए सर्वात्मसमर्पण किया है | तुम्हारे डरपोक पति, जो कंस से भयभीत रहते हैं, उनसे तुम परम श्रेष्ठ हो, तुम बहादुर हो | जिसके अन्दर भय है, उसके हृदय में भक्ति कहाँ है, वह तो कायर है | तुमने मेरे लिए त्याग किया है इसलिए त्रिलोकी में तुम्हारा सम्मान होगा |" हम जैसे लोग त्याग नहीं करते हैं, हम तो दुनिया को पकड़े रहते हैं परन्तु ऊपर से भक्त का स्वांग बनाए रहते हैं और सोचते हैं कि कहीं कोई हमारी निंदा न कर दे, कोई हमसे कुछ कह न दे | यह चोरी है, यह भक्ति नहीं है | भगवान् ने यज्ञपत्नियों से कहा कि अब तुम्हारे पति लोग तुममें दोष नहीं देखेंगे | अब तो सारा संसार तुम्हारा सम्मान करेगा | जैसे - मीरा जी के समय में लोग उनको गालियाँ देते थे, उनकी निंदा करते थे परन्तु आज सारा संसार उनका सम्मान करता है, उनकी प्रशंसा करता है | एक बार कसौटी देनी पड़ती है, सबको देनी पड़ती है कि हम भगवान् से कितना प्रेम करते हैं, भगवान् के लिए कितना त्याग कर सकते हैं | जो इस दुनिया के विषयों को पकड़ता है, यहाँ के मिथ्या मान-प्रतिष्ठा को पकड़ता है उसको कभी भी भक्ति नहीं मिलती, चाहे वह वैदिक विधि से कितना भी बड़ा यज्ञ क्यों न कर ले, ऊपर से महापंडित-ब्राह्मण का चोला धारण कर ले लेकिन उसका सारा मामला गड़बड़ रहता है | भगवान् के आश्वासन दिए जाने पर यज्ञपत्नियाँ अपने घर पहुँचीं, उनके मुख पर तेज था | भजन करने से स्वमेव ही तेज की प्राप्ति होती है | यह कथा नरसी जी राजसभा में विराजमान विद्वान् पंडितों और महात्माओं को सुना रहे हैं | उन्होंने कहा कि जब याज्ञिक ब्राह्मणों ने देखा कि हमारी पत्नियाँ तो भगवान् कृष्ण का दर्शन कर आईं और हम कंस के भय से उनका दर्शन करने नहीं जा सकते तो वे अपने आप को धिक्कारते हुए कहने लगे –

धिग् जन्म नस्त्रिवृद् विद्यां धिग् व्रतं धिग् बहुज्ञताम् |
धिक् कुलं धिक् क्रियादाक्ष्यं विमुखा ये त्वधोक्षजे ||

(श्रीभागवतजी १०/२३/३९)

हम उच्च ब्राह्मणकुल में पैदा हुए लेकिन हमें धिक्कार है जो हम कंस के भय से भगवान् श्रीकृष्ण का दर्शन करने नहीं जा सकते, हमसे अच्छी तो हमारी ये स्त्रियाँ हैं | हमने वेदाध्ययन किया किन्तु हमारी विद्या को धिक्कार है | ये गँवार बिना पढ़ी-लिखी स्त्रियाँ हमसे श्रेष्ठ हैं | हमने यज्ञ करने के लिए बड़े-बड़े ब्रह्मचर्य आदि व्रत धारण किये और हमारी स्त्रियों ने ऐसा कोई व्रत धारण नहीं किया फिर भी ये हमसे श्रेष्ठ हैं | हमारे व्रत को धिक्कार है, हमारे शास्त्र ज्ञान, हमारी समझदारी को धिक्कार है, हमसे ये मूर्ख स्त्रियाँ अच्छी हैं | हमारे कुल, हमारे माता-पिता, दादा-दादी को धिक्कार है, जिसने ऐसी सन्तान उत्पन्न की, जो भक्ति करने से भय करती है | उस खानदान को धिक्कार है, जो भगवान् की भक्ति करने से डरे | भय तो चोरी-छिनारी आदि पाप कर्मों से करना चाहिए |

भक्ति करे कोई शूरमा जाति वरन कुल खोय |

भक्ति तो शूरवीर लोग करते हैं, जो इस दुनिया को मक्खी-मच्छर भी नहीं समझते | वे दुनिया वालों को चुनौती देते हैं कि तुम करते रहो हमारी निंदा, तुम हमारा कुछ नहीं कर सकते | वेदज्ञ ब्राह्मण आगे बोले कि हम वैदिक कर्मकाण्ड में बड़े चतुर हैं | त्रिकाल स्नान करते हैं, शुद्धि से रहते हैं परन्तु इसे धिक्कार है, इससे तो इन स्त्रियों का अशुद्ध शरीर अच्छा है, हमारी पवित्रता, त्रिकाल स्नानादि को धिक्कार है | हमारी स्त्रियों का शरीर भले ही अशुद्ध हो किन्तु इन्होंने भगवद्दर्शन हेतु साहस किया अतः ये धन्य हैं, हमसे श्रेष्ठ हैं, ये तो शूरमा हैं और हम चूरमा ही रह गए क्योंकि हम अधोक्षज श्रीकृष्ण के पास नहीं पहुँच सके | हम स्वार्थ के बंधन में पड़े हैं |

नूनं भगवतो माया योगिनामपि मोहिनी |
यद् वयं गुरवो नृणां स्वार्थे मुह्यामहे द्विजाः ||
अहो पश्यत नारीणामपि कृष्णे जगद्गुरौ |
दुरन्तभावं योऽविध्यन्मृत्युपाशान् गृहाभिधान् ||

(श्रीभागवतजी १०/२३/४०,४१)

ये स्त्रियाँ हैं लेकिन इन्होने भव बंधन के पाश को तोड़, मृत्युपाश को तोड़ दिया | अगर तुम भगवान् के लिए सब कुछ छोड़ देते हो, मान मर्यादा को जला दोगे तो तुम मृत्यु के पाश से मुक्त हो जाओगे लेकिन एक कायर जो दुनिया से डरता है वह मृत्यु पाश को भला कैसे तोड़ सकता है | क्रमशः...

गोपी-गीत

(श्रीरामानुजाचार्यजी के संप्रयास से सरस-भक्ति का संप्रसार)

श्रीबाबामहाराज के सत्संग (१/११/१९९५) से संग्रहीत

(संकलनकर्त्री / लेखिका –साध्वी माधुरीजी , मान मन्दिर बरसाना)

जब यवन-बालिका शाहजादी की दैन्यमयी करुण पुकार (स्वाभाविक प्रेममयी आराधना) से श्रीभगवान् की मूर्ति राजदरबार में बैठे हुए सभी सभासदों व स्वामी रामानुजाचार्यजी के देखते-देखते उस प्रेमाराधिका की गोद में चली गयी, तब स्वामीजी को बहुत आश्चर्य हुआ कि अरे ! मुझे तो स्वयं भगवान् ने यहाँ भेजा था और कहा था कि मैं (स्वप्रतिमा चलविग्रह स्वरूप) तुम्हारे साथ चलूँगा लेकिन यहाँ इन्होंने मेरे साथ धोखा किया और जानबूझकर सबके सामने मेरी इज्जत नष्ट की | इस जीने से तो मरना अच्छा है | क्रोध में रामानुज स्वामी ने अपने दण्ड को वहीं राजदरबार में तोड़ दिया और उसे जमीन पर पटक दिया तथा सन्यास के चिन्हों और वस्त्रों को भी जमीन पर फेंकने लगे और भगवान् पर क्रोध करके कहने लगे कि तुम्हारा सब झूठा मार्ग है, तुमने मेरे साथ बहुत बड़ा धोखा किया | जब रामानुजाचार्यजी नाराज हो गये तो वह मूर्ति शाहजादी की गोद से चलकर स्वामी जी की गोद में चली गयी | प्रभु भी खिलाड़ी हैं, खेल खेला करते हैं | रामानुजाचार्यजी ने मूर्ति को उठा लिया, उधर वह लड़की मूर्छित हो गयी | बादशाह ने कहा – "महाराज ! अब यह लड़की यहाँ तो जियेगी नहीं, अतः इसे भी आप अपने साथ ले जाओ |" जब मूर्ति के साथ ले जाने की बात सुनी तो उस लड़की के प्राण वापस आ गये | स्वामीजी ने कहा – "ठीक है, जब यह जी नहीं सकती तो हम इसको अपने साथ ले चलने की अनुमति देते हैं |" जब वह (शाहजादी) स्वामीजी के साथ चल पड़ी तो रास्ते में उसे मूर्ति के दर्शन होते रहे | रामानुज संप्रदाय में कर्मकाण्ड का बहुत प्रचलन है, बहुत छुआछूत माना जाता है | जब उस मूर्ति की मन्दिर में स्थापना हो गई तो उस लड़की को मन्दिर के भीतर जाने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया क्योंकि वह मुसलमान थी | जब उसे मंदिर में प्रवेश करने से रोक दिया गया तो वह तो प्रभु के वियोग में जीवित नहीं रह सकी, अतः उसने मन्दिर की देहरी पर ही अपने प्राण छोड़ दिये | जब उसके प्राण छूट गये तो भगवान् ने स्वप्न में कहा कि मैं भी इसके बिना इस मन्दिर में नहीं रह सकता, इसकी स्थापना मेरे साथ ही मंदिर में करो तो मैं इस मंदिर में रहूँगा | तब उस लड़की की सोने की प्रतिमा बनाकर मन्दिर में भगवान् के बगल में स्थापित की गई, अतः श्रीभगवान् भी अनन्य प्रेमीभक्तों की भक्ति करते हैं, ऐसे प्रेमाराधकों का सतत् स्मरण (भक्तों के नाम, रूप, लीला, गुणों आदि का चिन्तन) करते हैं, इसलिए श्रीभक्तमालजी के प्रधान रसिक श्रोता श्रीठाकुरजी ही हैं| वह लड़की शाहजादी बहुत सुंदर थी, उसमें भक्ति का तेज था | एक मुसलमान लड़का कभी-कभी उसे दूर से देख लेता था, उसने निर्णय कर लिया था कि मैं प्रेम करूँगा तो इसी लड़की से करूँगा अन्यथा अन्य किसी लड़की का मैं मुँह नहीं देखूँगा | जब वह लड़की दिल्ली से दक्षिण भारत को चली थी तो यह लड़का भी उसके पीछे-पीछे चल पड़ा था | जब दक्षिण भारत पहुँचा तो इस लड़के का प्यार भगवान् से तो था नहीं, उस लड़की की मृत्यु होने पर वह रामानुज स्वामी के पास जाकर रोने लगा और बोला – "महाराज ! मैं तो दोनों तरह से मरा, न खुदा-मियाँ से मेरा प्रेम हुआ और न वह लड़की मुझे मिली, अब मैं क्या करूँ, कम से कम इतना कर दीजिए कि मुझे मंदिर के भीतर जाने की अनुमति दीजिये ताकि मैं उस लड़की की मूर्ति के ही दर्शन कर लिया करूँ |" रामानुजाचार्यजी

ने कहा – "ये हमारा मर्यादा का मार्ग है | तुम नीलाचल जगन्नाथपुरी चले जाओ, जगन्नाथजी पतितपावन हैं |" फिर वह लड़का नीलाचल आया और उसको भी भक्ति मिली | कथनाशय है कि भावग्राही श्रीभगवान् केवल विशुद्ध प्रेम के ही वश में होते हैं, इसलिए गोपियों ने भगवान् से कहा – **प्रणतदेहिनां पापकर्शनम्** ...(भागवत १०/३१/७) जो सचमुच भगवान् के शरणागत हैं, उनके लिये कुछ भी असंभव नहीं है | 'पापकर्शनम्' - शरणागति के कारण पाप नष्ट होना तो छोटी बात है, सच्ची प्रणति हो तो हमारे सामने प्रभु नाच सकते हैं, दौड़ सकते हैं, खेल सकते हैं, खा-पी सकते हैं जैसा कि मुसलमान लड़की शाहजादी का स्वाभाविक सच्चा प्रेम था श्रीभगवान् में |

रामानुजाचार्यजी ने आदिशंकराचार्य जी के भक्तिहीन अद्वैत-दर्शन का खंडन करने के लिए ब्रह्मसूत्र पर श्रीभाष्य की रचना करके वैष्णव-दर्शन विशिष्टाद्वैत मत की स्थापना करके सम्पूर्ण भारत में भक्ति का व्यापक प्रचार-प्रसार किया | रामानुज स्वामी के शिष्य श्रीकूरेश जी का अपने गुरुदेव की इस विश्वव्यापी सफलता में बहुत बड़ा योगदान था | यदि कूरेशजी न होते तो रामानुज स्वामी द्वारा अद्वैत मत के खण्डन हेतु ब्रह्मसूत्र पर श्रीभाष्य की रचना न हो पाती | स्वामी रामानुजजी प्रथम आचार्य थे, जिन्होंने शंकराचार्यजी के विरुद्ध आवाज उठाई जबकि उनके विरोध में अपने मत की स्थापना करना कोई साधारण बात नहीं थी क्योंकि उस समय सम्पूर्ण भारतवर्ष में शंकराचार्यजी के अद्वैत मत का बहुत अधिक प्रभाव फ़ैल चुका था | शंकराचार्यजी के मत का शास्त्रीय प्रमाण सहित खण्डन करने के लिए आचार्य बोधायन कृत ग्रन्थ 'बोधायन-वृत्ति' की उस समय महती आवश्यकता थी | इस ग्रन्थ में अद्वैत मत को त्याज्य बताया गया है | तर्क सहित अद्वैत मत के विरुद्ध इस ग्रन्थ में विस्तार से उल्लेख किया गया है | उस समय वह ग्रन्थ भारत में कहीं नहीं था | सनातन धर्म के अनेकों प्राचीन ग्रन्थ लुप्त हो चुके हैं, जैसे – रावण-संहिता, भ्रगु-संहिता आदि; इन ग्रन्थों में मनुष्य के तीन जन्मों तक का हाल बताया गया है कि पिछले जन्म में तुम क्या थे, अगले जन्म में कहाँ जाओगे ? इस प्रकार प्राचीनकाल में भारतवर्ष में बहुत-सी दिव्य विद्याएँ थीं | प्राचीन भारत में 'कश्मीर' विद्या का केंद्र था, वहाँ सनातन धर्म के शास्त्रों का इतना विशाल पुस्तकालय था कि जब मुस्लिम हमलावरों ने उसमें आग लगाई तो छः महीने तक वहाँ आग जलती रही | लाखों-करोड़ों की संख्या में वहाँ पुस्तकों का विशाल भंडार था, जिसे बर्बर, नीच मुसलमानों ने ईर्ष्यावश जला दिया | यह घटना श्रीरामानुज स्वामी के बाद घटित हुई है, उनके पहले इतना अत्याचार नहीं था | 'स्वामी रामानुजजी' आदिशंकराचार्यजी के बाद हुए हैं | शंकराचार्यजी के समय भारत में बौद्धों का व्यापक प्रभाव था | उस समय भारत में हत्यारे असभ्य मुसलमानों का आगमन नहीं हुआ था | शंकराचार्यजी ने बौद्ध धर्म का खण्डन करके अद्वैत मत का सम्पूर्ण भारत में प्रचार किया | उनके बाद रामानुजाचार्यजी का आविर्भाव हुआ, जिन्होंने दृढ़तापूर्वक अद्वैत मत का खंडन किया | उनके बाद भारत में असुर मुसलमानों का आक्रमण हुआ | बाबर के साथ भारत में सोलह हजार मुसलमान आये थे और आज तो इस देश में इन म्लेच्छों की संख्या करोड़ों में है | आज भारत में जितने भी मुस्लिम हैं, वे पहले हिन्दू थे, उन्हें विदेशी मुसलमान पिशाचों ने तलवार के बल पर जबरन मुसलमान बना दिया |

जब रामानुजाचार्यजी ने सुना कि 'बोधायन-वृत्ति' ग्रन्थ कश्मीर में है तो उसे प्राप्त करने के लिये वह अपने शिष्य कूरेशजी के साथ दक्षिण भारत से हजारों मील पैदल चलकर कश्मीर आये परन्तु भगवान् की लीला विचित्र है, देवी-देवता भी खेल करते हैं | कश्मीर के राजा से स्वप्न में सरस्वती जी ने कहा कि दक्षिण भारत से रामानुज स्वामी 'बोधायन-वृत्ति' ग्रन्थ लेने के लिए आये हैं, इनसे तुम सावधान रहना | सरस्वतीजी द्वारा स्वप्न में ऐसा निर्देश देने पर राजा ने कड़ा पहरा लगा दिया ताकि यह ग्रन्थ चोरी न हो जाये | जब रामानुज स्वामी और कूरेशजी

कश्मीर पहुँचे और ग्रन्थ की माँग की तो उन्हें इस ग्रन्थ का दर्शन करने तक की अनुमति नहीं दी गयी | अब ये दोनों गुरु और शिष्य विचार करने लगे कि इस ग्रन्थ की चोरी कैसे की जाये क्योंकि बिना चोरी किये यह ग्रन्थ उपलब्ध नहीं हो सकता था | अब देखो, इतने बड़े आचार्य चोरी करने जा रहे हैं, ऐसा क्यों कर रहे हैं क्योंकि जनकल्याण के लिए, संसार के कल्याण हेतु अधर्म भी धर्म है | किसी प्रकार से उन्हें यह ग्रन्थ प्राप्त हुआ और उसे लेकर ये गुरु और शिष्य कश्मीर से भागे | एक महीने तक वे जंगलों में भागते रहे | जब भाग गये तो देवी ने स्वप्न में राजा को बताया कि रामानुजाचार्यजी तो पुस्तक लेकर चले गये, तेरा पहरा लगाना व्यर्थ गया | इस घटना से पता लगता है कि देवी-देवता भी शुभ कार्य में बाधा डालते हैं | रामानुजाचार्यजी और कूरेशजी एक महीने तक ग्रन्थ लेकर जंगलों में भागते रहे परन्तु राजा की फ़ौज ने एक महीने बाद उन्हें पकड़ लिया और उनसे ग्रन्थ छीनकर ले गये | जब ग्रन्थ को सिपाही लोग ले गये तो रामानुजाचार्यजी बहुत दुःखी हुए और उदास होकर बैठ गये | उन्हें शोकग्रसित देखकर कूरेश जी ने पूछा – "गुरुदेव ! आप उदास क्यों हैं ?" रामानुज स्वामी बोले – "मैं उदास इसलिये हूँ क्योंकि बोधायन भगवान् का ग्रन्थ छिन गया | अब श्रीभाष्य कैसे बनेगा ? आदिशंकराचार्य के अद्वैत मत का खण्डन अब मैं किस प्रकार कर पाऊँगा ?" कूरेशजी ने कहा – "गुरुदेव ! आप चिंता न करें, मैंने वह सम्पूर्ण ग्रन्थ कंठस्थ कर लिया है |" रामानुजाचार्यजी ने पूछा – "ऐसा कैसे हुआ ?" कूरेशजी बोले – "एक महीने से मैं सोया नहीं | दिन भर तो मैं आपके साथ उस ग्रन्थ को लेकर जंगलों में भागा करता था और रात में आपकी चरण सेवा करके आपको शयन कराने के उपरान्त सारी रात मैं उस ग्रन्थ को रटता था |" रामानुजाचार्यजी ने कहा – "अच्छा ! यदि वह ग्रन्थ तुम्हें कंठस्थ हो गया है तो मुझे सुनाओ |" कूरेशजी ने गुरुदेव को सम्पूर्ण बोधायन-वृत्ति ग्रन्थ सुना दिया | आचार्यचरण अत्यधिक प्रसन्न हुए और उन्होंने कूरेशजी को अपने हृदय से लगा लिया और कहा – "वत्स ! तुमने संसार का बहुत बड़ा कल्याण किया है | चलो, अब हम श्रीभाष्य की रचना करें |" श्रीभाष्य की रचना करके रामानुजाचार्यजी ने आदिशंकराचार्यजी के अद्वैत मत का खंडन करके विशिष्टाद्वैत मत की स्थापना की तथा अद्वैतवादी विद्वानों से शास्त्रार्थ करके उनको पराजित किया तथा संपूर्ण भारतवर्ष में वैष्णव मत का प्रचार-प्रसार किया | क्रमशः...

वेद भेद पायो नहीं, नेति-नेति कह वैन ।
ता मोहन सों राधिका, कहत महावर देन ॥

ऐसा ब्रह्म है वो जिसका वेद भी भेद नहीं पा सकते इसलिए वेद बोले - "न इति-न इति" हम नहीं पा सके ।

कामं तूलिकया करेण.....गतिर्लास्यैकलीलामयी ॥

(रा.सु.नि. २०५)

राधिका रानी अपने चरणों में उस ब्रह्म को बैठा के कहती हैं कि महावर की रचना करो और वह करने लग जाते हैं । श्रीकृष्ण हाथों में विशेष तूलिका (ब्रश) लेकर के श्रीजी के चरणों में महावर देने बैठ जाते हैं । ऐसी हैं राधिका रानी, जिनके चरणों में बैठकर ब्रह्म श्रीकृष्ण भी महावर की रचना करते हैं ।

नाम-महिमा

(आराधना से अहंशून्य अन्तःकरण)

श्रीबाबा महाराज के सत्संग (२१/५/२०१०) से संग्रहीत,
(संकलनकर्त्री / लेखिका –साध्वी ब्रजबाला जी, मान मन्दिर, बरसाना)

आजकल के आधुनिक (modern) मनगढ़ंत रसिक लोग कुछ भी कह दिया करते हैं जबकि वास्तविकता यह है कि नाम के बिना भक्ति विधवा हो जायगी; यह इस चौपाई – **'भगति सुतिय कल करन विभूषन'**
(श्रीमानसजी, बालकाण्ड - २०) में कहा गया है | नाम की वास्तविक महिमा का ज्ञान हम जैसे मूर्खों को नहीं है | भक्तमाल में एक कथा है कि एक बार नारद जी ने भगवान् से कहा कि आप मुझको अपने भक्तों का दर्शन करायें, ऐसा क्यों कहा उन्होंने ? क्योंकि वे भक्तों की महिमा जानते हैं और हम जैसे मूर्ख भक्तों की महिमा नहीं जानते हैं, इसलिए आपस में एक-दूसरे से चिढ़ते हैं, नाराज रहते हैं, बोलते नहीं हैं, ये सब झगड़ा चलता रहता है | राग-द्वेष तो कभी छूटता ही नहीं, कोई व्यक्ति शिकायत करता है कि दूसरे का पक्ष किया गया, हमारा नहीं किया गया, हम बीमार थे, हमारी चिकित्सा नहीं करायी गयी, दूसरे की चिकित्सा करायी गयी | इस प्रकार की बातें चलती रहती हैं | ये सब अज्ञान है, अरे ! दूसरे की सेवा हो गयी तो खुश होना चाहिए, वह भक्त है उसकी सेवा हो गयी किन्तु हम जैसे लोग ईर्ष्या करते हैं कि उसकी सेवा हुई किन्तु हमारी नहीं हुई | इस तरह से विनाश का रास्ता तैयार हो जाता है, राग-द्वेष आया और विनाश का रास्ता आ गया, इसका तात्पर्य यही है कि ईश्वर-आश्रय नष्ट हो गया | भगवान् का आश्रय तब होता है जब –

वीतरागभय क्रोधा मन्मया मामुपाश्रिताः ।
बहवो ज्ञानतपसा पूता मद्भावमागताः ॥ (श्रीगीताजी ४/१०)

राग-द्वेष चला गया तब भगवदाश्रय होता है और यदि तुम राग-द्वेष (परस्पर होड़) में पड़े हो तब प्रभु का आश्रय तो नष्ट हो गया | किसी जीव की सहायता ईश्वर ही करता है, मनुष्य कोई क्या करेगा सहायता ? तुम जीव के आश्रय में भगवान से विमुख हो रहे हो लेकिन अपनी कमी को समझ नहीं सकते, केवल राग-द्वेष में पड़े हो | 'कोई हमारी सहायता न करे' यही भगवान् का आश्रय है | विदुरजी ने धृतराष्ट्र से यही कहा था कि ऐसी जगह जाके शरीर छोड़ो जहाँ कोई पानी देने वाला न हो –

गतस्वार्थमिमं देहं विरक्तो मुक्तबन्धनः ।
अविज्ञातगतिः जह्यात् स वै धीर उदाहृतः ॥

(श्रीभागवतजी १/१३/२५)

'अविज्ञातगतिः' अर्थात् वहाँ शरीर छोड़ो जहाँ तुमको कोई पानी देने वाला न हो, इसे ईश्वर-आश्रय कहते हैं और अभी तुम इस चक्कर में पड़े हो कि उसका इलाज हो गया लेकिन हमें तो पूछा भी नहीं गया, हमको गाड़ी में नहीं ले जाया गया, ये सब क्या है, यह ईश्वर-आश्रय की विहीनता है क्योंकि अनादिकाल से हम लोगों का राग-द्वेष का अभ्यास चल रहा है – 'बानी जाकी बान न जाय, कुत्ता मूते टांग उठाय |' इन सब वृत्तियों के रहते हुए भगवद् आश्रय सिद्ध नहीं होता, नाम भी फल नहीं देगा | जीव गोस्वामी जी ने जो दस नाम अपराध बताये हैं, उन अपराधों का मूल 'राग-द्वेष' बताया है | जब तक अहंता-ममता है तब तक चाहे दिन-रात नाम जपते जाओ, खूब कीर्तन करते जाओ किन्तु तुम नाम को नामाभास कर दोगे और कुछ फल नहीं मिलेगा, यह मूलभूत सिद्धान्त है | हम नाम को नामाभास न कर पावें, इसके लिए चैतन्य महाप्रभु जी ने अहंता-ममता का नाश जरूरी बताया है | इसीलिए महाप्रभु जी ने कहा था –

"तृणादपि सुनीचेन तरोरपि सहिष्णुना,
अमानिना मानदेन कीर्तनीयः सदा हरिः |"

इससे अहंता-ममता का नाश हो जाता है | इसका लक्ष्य क्या है, इसका लक्ष्य है कि अपने आपको तिनका से भी ज्यादा छोटा समझ लो | तिनका या घास कभी नहीं कहती कि तुमने मेरे ऊपर अपना पाँव या जूता क्यों रखा ? घास पर तुम जूता पहनकर चलो तो घास कभी मना नहीं करती है, कभी प्रतिरोध नहीं करती है | महाप्रभु जी ने कहा कि उससे भी नीचे बनो, उससे भी नीच कैसे बनेंगे ? जब तुम घास पर जूता पहनके आगे निकल जाओगे तो घास फिर से अपना सिर उठा लेती है लेकिन भक्त कभी अपना सिर नहीं उठाता, इसीलिए महाप्रभु जी ने कहा - तृणादपि सुनीचेन | भक्त में कभी अहंता आती ही नहीं है | घास में अहंता आ जायेगी लेकिन भक्त में कभी अहंता नहीं आएगी | अहंता के नाश से समस्त बीमारियाँ (विकृतियाँ) दूर हो जायेगीं और फिर कभी नामापराध नहीं होगा | अहंता को इस प्रकार कुचल दो कि पुनः यह सिर न उठा सके, जैसे - घास में वैसे तो अहंता नहीं होती किन्तु थोड़ी-सी होती है और वह पीछे से फिर सिर उठा लेती है लेकिन भक्त कभी सिर नहीं उठाता | यह एक ही श्लोक – **"तृणादपि सुनीचेन..."** क्रियात्मक रूप से जीवन में आ जाए तो नाम का वास्तविक फल मिल जाएगा | 'तरोरपि सहिष्णुना' वृक्ष से भी ज्यादा सहनशील बनो | पेड़ में कोई पत्थर मारता है तो बदले में वह दण्ड न देकर फल देता है, तो वृक्ष इतना सहनशील होता है कि स्वयं कष्ट सहकर दूसरों की भलाई ही करता है, ऐसे ही संतजन होते हैं | "तुलसी संत सो अम्ब तरु" तुलसीदासजी ने संत को आम का पेड़ बताया है, इमली का पेड़ नहीं बताया है जबकि इमली भी फल है लेकिन वह खट्टी होती है | संत खट्टा नहीं होता है, वह आम का पेड़ होता है |

"तुलसी संत सो अम्ब तरु, फूलि फरै पर हेत |
इत ते वे पाहन हनैं, उत ते वे फल देत ||"

संत आम का पेड़ है, आम नहीं है | पेड़ में फल लगते हैं तो वह स्वयं नहीं खाता है, वह केवल दूसरों के लिए ही फल लगाता है, वैसे ही संत-भक्त की समस्त क्रियायें दूसरों को रस, प्रेम और सुख देने के लिए होती हैं और हम जैसे लोग ईर्ष्यावश यही कहते रहते हैं कि हमारा सम्मान नहीं किया गया, हमारा इलाज नहीं कराया गया, हमको पूछा भी नहीं गया, हमको कार में नहीं बिठाया गया; ऐसी मनोवृत्ति दिखाती है कि हम लोग संसारी हैं, हम जैसे लोग भक्त नहीं हो सकते, केवल अपनी अहंता के भक्त हैं और हमारा सम्पूर्ण जीवन इसी तरह से जाएगा; इस वृत्ति में सुधार नहीं होता है, यह बड़े आश्चर्य की बात है | तुलसीदास जी ने कहा है कि संत आम के वृक्ष की तरह दूसरों के हित के लिए जीते हैं और हम जैसे लोग अपने सुख, अपने हित और अपने मान-सम्मान के लिए जीते हैं, उसका फल राग-द्वेष होता है जिसके कारण हम लोग प्रायः ओछी मानसिकता का प्रदर्शन करते हैं कि हमें पहनने के लिए वस्त्र नहीं मिला, उन्होंने हमसे बात नहीं की, हमारा सम्मान नहीं किया, यह क्या है, यह एकमात्र अहंता की उपासना है जबकि हमको नहीं पूछा गया, हमारा सम्मान नहीं हुआ, इसमें प्रसन्न होना चाहिए और यह भाव रखना चाहिए कि हम इस योग्य ही नहीं हैं कि हमको पूछा जाए | ऐसा भाव रखना दैन्य है | अगर ध्यान से देखा जाय तो पता पड़ेगा कि हर व्यक्ति की क्रिया हर समय अहंता में जा रही है जबकि समस्त कर्मों का न्यास भगवान् में होना चाहिए | इसके बिना हम भगवान् के प्रिय नहीं बन सकेंगे और न ही भगवान् हमारे प्रिय बन सकेंगे | भगवान् ने उद्धव जी को अपने अंतिम उपदेश में यही कहा कि मेरा प्यारा वही है जिसके समस्त कर्म मेरे लिए हैं, वह मेरा प्यारा ही नहीं अपितु मेरा हृदय बन जाता है और अमृतत्त्व (अमरपद) को प्राप्त करके काल को जीत लेता है तथा मेरा स्वरूप बन जाता है | भागवत ११/२/३६ में भगवान् ने कहा कि सात प्रकार के (तन, मन, वचन, इन्द्रिय, बुद्धि, अहंकार, आदत 'वृत्ति' से) कर्म भक्त मेरे लिए ही करता है –

कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा बुद्ध्याऽऽत्मनावानुसृतस्वभावात्
करोति यद् यत् सकलं परस्मै नारायणायेति समर्पयेत्तत् ॥

क्रमशः...

धाम-महिमा

(नित्य-निरन्तरता से ही साधन की सफलता)

श्रीबाबामहाराज के सत्संग (७/५/ २००६) से संग्रहीत

(संकलनकर्त्री / लेखिका –साध्वी सुगीताजी, मान मन्दिर, बरसाना)

निर्माय चारुमुकुटं नवचन्द्रकेण,
गुञ्जाभिरारचितहारमुपाहरन्ती |
वृन्दाटवीनवनिकुञ्जगृहाधिदेव्याः,
श्री राधिके ! तव कदा भवितास्मि दासी ||

(श्रीराधासुधानिधि-३०)

प्रस्तुत श्लोक में धाम और धामिनी (श्रीराधा), सहचरी तथा उनकी सेवा, इन चारों तत्वों का उल्लेख हुआ है | चारों में सबसे पहले धाम को ही लिया गया है क्योंकि धाम सुलभ है | सुलभ इसलिए कहा गया क्योंकि पातंजलि भगवान् ने अपने योगशास्त्र में साधन के चार अंग बताये | साधन वही श्रेयस्कर और ग्राह्य होता है तथा उसी को साधन भी कहा जाता है जो चतुरंगपूर्ण हो, जिसके चार अंग पूर्ण हों उसको साधन कहते हैं; जैसे - एक चारपाई के चार पाये होते हैं, एक भी पाया खंडित होता है तो चारपाई सुखद नहीं होती है; इसी प्रकार कोई भी साधन है, किसी भी मार्ग का है, उसके सर्वांगों का होना परमावश्यक है | पातंजलि भगवान् का योगशास्त्र सभी के लिए है और समय-समय पर सभी आचार्यों ने भी उसका उपयोग किया है क्योंकि वह क्रियात्मक अधिक है | ऐसा कोई भी आचार्य नहीं होगा जो पातंजलिकृत योगशास्त्र के श्लोक "योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः" को न कहता हो और सबने निभ्रांत (निःसंदेह) मत से इसे स्वीकार किया है कि चित्तवृत्तियों का निरोध ही योग है | यद्यपि कई धातुयें हैं जिनसे योग शब्द की निष्पत्ति हुई है, चाहे युज् समाधौ से योग शब्द बना हो, चाहे यजुर् योगे से बना है | समाधि भी है तो उसमें भी चित्तवृत्ति का निरोध होगा ही, योग भी है तो योग किसका करना है, हाथ-पाँव का योग तो होता नहीं है, चित्त से उसका संयोग करना वृत्तियों के द्वारा; इस तरह से सभी आचार्य इस मत को मानते हैं | पतंजलि भगवान् ने बताया कि साधन वही है, जिसके चार अंग होते हैं | उनका यह प्रसिद्ध सूत्र है – **"स तु दीर्घकाल नैरन्तर्य सत्कारासेवितोदृढ़भूमि ||"** कोई ज्ञानमार्गी है, उसमें भी चारों बातें होनी चाहिए, भक्तियोगी है, उसमें भी चारों बातें अवश्य चाहिए | ये चारों बातें क्या है ? किसी विशेष साम्प्रदायिक परम्परा से उनका तात्पर्य नहीं है | जिसका जो भी साधन है, कुछ भी है वह, जब उसमें चार चीजें रहेंगी तभी वह साधन माना जायेगा | पहला अंग है – "स तु दीर्घकाल" – कोई आदमी यह सोचे कि हम छः महीने का कोर्स करके, भगवत्प्राप्ति करके चले जायें | जैसे - स्कूली परीक्षाओं में १ साल बाद वार्षिक परीक्षा होती है या दो साल अथवा तीन साल का कोर्स होता है तो ये सब बातें संसारी पढ़ाई करने वाले बच्चों की होती हैं | इसीलिए पातंजलि भगवान् ने पहले ही लिख दिया कि निश्चित ही साधन की कोई सीमा नहीं तय की जा सकती है | 'दीर्घकाल' – यह विचार करके चलना चाहिए कि साधन दीर्घकाल का होगा | दीर्घकाल कितना बड़ा है, इसकी कोई सीमा नहीं है | स्वयं भगवान ने कहा है –

मनुष्याणां सहस्त्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये |
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः ||

(श्रीगीताजी ७/३)

हजारों जन्म भी लग जाते हैं | इसलिए जो लोग वाद-विवाद करते हैं कि अमुक अनुष्ठान को करने के बाद इतने समय में प्राप्ति हो जायेगी, ये सब विवाद महर्षि पतंजलि ने हटा दिया और कहा – 'दीर्घकाल' अर्थात् यह विचार करके इस मार्ग पर चलो कि

"जन्म कोटि लगि रगर हमारी |
बरउँ संभु न त रहउँ कुँआरी ||"

(श्रीमानसजी, बालकाण्ड - ८१)

इसी को समर्पण कहते हैं | सब कुछ समर्पित कर दिया फिर यह जो बचाके रखने की बात है कि दो साल बाद हम लौट जायें कि तीन साल बाद लौट जायें, यह समर्पण नहीं है, इसीलिए भगवान् ने भी कहा कि इसको समर्पण नहीं कहते हैं, ये सब बातें चोरी की हैं कि लौट जायें, इतने साल हम साधन करके लौट जायेंगे | भगवान् ने कहा है – **"तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत |"**

(श्रीगीताजी १८/६२)

सर्वभाव से भगवान् की शरण में जब चले गये तो कोई भाव बाकी नहीं रहा - न लौटने का, न वापस जाने का, ये सब बातें खत्म हो गयीं | जब तुम सर्वभाव से उसकी शरण में जाओगे तब उसकी कृपा होती है –

तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम् ||

तब तुमको अविनाशी पद मिलेगा, कृपा मिलेगी | हम भगवान् को ठग नहीं सकते | सर्वभाव से उसकी शरण में नहीं गये, दो साल के लिए गये फिर लौट आयेंगे, मौज मारेंगे – ये सब सर्वभाव नहीं है, यह कपट है | हम थोड़े समय के लिए आये हैं, फिर लौट जायेंगे, ये कपट है, समर्पण नहीं है | समर्पण तो जहाँ भी होता है, वहाँ फिर लौटने की बात नहीं होती | अगर धाम के प्रति समर्पण हो गया है तो –

"वृन्दावन में मंजुल मरिबो |
जीवन्मुक्त सबै ब्रजवासी, पद रज सों हित करिबो ||"

'मंजुल' का अर्थ है सुंदर अर्थात् ब्रज-वृन्दावन में होने वाली मृत्यु भी सुंदर है | सबसे अधिक भयानक स्थिति मृत्यु की होती है | जब हमने समर्पण कर दिया तो फिर अनेक कष्ट भी सुंदर हैं | "कोटिक हू कलधौत के धाम, करील की कुंजन ऊपर वारौं |" ब्रज में करील के काँटों पर हम सोने की करोड़ों हवेलियाँ न्यौछावर कर देंगे इसको प्यार (प्रेम), समर्पण या इश्क कहते हैं | रसिकों ने यहाँ तक लिखा है –

"कोटि मुक्ति सुख होत गोखरू, जबै लगत गड़ि पायन |"

करोड़ों मुक्ति के सुख का हमें अनुभव होता है जब ब्रज का काँटा पैर में चुभता है, इसको समर्पण कहते हैं, लेकिन यहाँ (ब्रज में) आकर, यहाँ रहकर ऐसा न करना कि 'अहं' बढ़े | 'अहंकार' बढ़ेगा तो फिर 'काम-क्रोध' बढ़ेंगे तब समर्पण नहीं रहेगा | समर्पण यह है – "जीवन्मुक्त सबै ब्रजवासी, पद रज सों हित करिबो |" सभी ब्रजवासियों की चरण रज से प्यार किया जाये क्योंकि सभी ब्रजवासी केवल भक्त ही नहीं, जीवन्मुक्त हैं, इसे समर्पण कहते हैं और जहाँ यह भावना है कि एक ने कहा – 'तू मूर्ख है', दूसरे ने कहा – 'तू मूर्ख, तेरा बाप मूर्ख है', ये सब बातें जहाँ हैं, वहाँ समर्पण नहीं है, वह तो अहंता का खेल है | समर्पण में तो फिर 'अहंता' शेष नहीं रहती है | सबसे पहले अहंता का ही समर्पण होता है | हम जैसे जो मूर्ख हैं वे अहंता और बढ़ा लेते हैं कि हमने इतना समर्पण किया, इतना दान दिया, उनका समर्पण भी अहंता की एक साधना हो जाती है | इसलिए दीर्घकालीन साधन की बात चल रही थी कि साधन तो वही है जो दीर्घकाल तक चलता है जैसे कि पातंजलि भगवान् ने साधन के पहले अंग में बताया – **"स तु दीर्घकाल"** दीर्घकाल से तात्पर्य है कि चाहे हजार जन्म हों, लाख जन्म हों, वह दीर्घकाल है | यह सोचकर पाँव आगे रखना चाहिए तभी वह साधन साधन बनता है, नहीं तो दो-चार दिन बाद साधन नहीं रह जाता है | प्रायः देखा जाता है कि दो-चार-छः दिन बाद ही साधन का रूप बदल जाता है, साधन असाधन हो जाता है | सभी कर्म श्रीजी में-भगवान् में अर्पित होने की जगह 'अहंता' में अर्पित होने लग जाते हैं | तब सब चीजें असाधन बन जाती हैं, जितनी प्रक्रियायें हैं – तिलक, माला, पाठ-पूजा, ये सब असाधन बन जाते हैं |

"तिलक लगाय चले स्वामी बन, विषयिन के मुख जोये |

क्रमशः...

गौ-सेवकों की जिज्ञासा

श्री माताजी गौशाला का बैंक खाता दिया जा रहा है :-

SHREE MATAJI GAUSHALA 915010000494364

श्रीमद्भगवद्गीता

('सहनशीलता' ही सच्ची शूरवीरता)

श्रीबाबामहाराज के सत्संग (१५/१/२०१२) से संग्रहीत

(संकलनकर्त्री / लेखिका –साध्वी पद्माक्षीजी , मान मन्दिर बरसाना)

तमुवाच हृषीकेशः प्रहसन्निव भारत ।
सेनयोरुभयोर्मध्ये विषीदन्तमिदं वचः|| १०||

बड़े लोगों को उनकी बात न मानने पर क्रोध आ जाता है लेकिन इस स्थिति में भगवान् क्रोधित न होकर हँसने लगे | यहाँ भगवान् के लिए शब्द प्रयोग किया गया - 'प्रहसन्निव' अर्थात् वह बहुत हँसे, अपने से छोटे की गलती पर हँस गए, ऐसे दयालु हैं | प्रायः जब छोटा व्यक्ति बात नहीं मानता है तो बड़ा आदमी नाराज हो जाता है, भगवान् ने शिक्षा दी कि ऐसा करना गलत है, बड़े का मतलब यह नहीं है कि तुम बड़प्पन का अहम् रखो या गुस्सा करो, बल्कि प्रहसन् – भगवान् बहुत ज्यादा हँसे, हृषीकेश – भगवान्, तम् – उनसे, इदं वचः उवाच – ये बात बोले, सेनयोरुभयोर्मध्ये - दोनों सेनाओं के बीच में | भगवान् को गुस्सा करना था लेकिन वह हँस गए, इस प्रकार भगवान् ने शिक्षा दिया कि क्रोध के मौके पर हँसो, दुःख के मौके पर हँसो, इस तरह से तुम शोक और क्रोध को जीत लो | हृषीकेश – कृष्ण, बड़े जोर से हँसे दोनों सेनाओं के बीच में, इसका एक कारण है कि जब शत्रु पक्ष देखता है कि हमारा विरोधी उदास है तो उसका उत्साह बढ़ जाता है और जब शत्रु पक्ष देखता है कि इनको तो कुछ भी उदासी नहीं है, हँस रहे हैं तो उसका मनोबल गिर जाता है | यह नीति, धर्म और ज्ञान की दृष्टि से भी बढ़िया है कि क्रोध के मौके पर हँसो, दुःख के मौके पर हँसो, ऐसा भगवान् ने स्वयं करके दिखाया है | यह एक बहुत बड़ा गुण है | कोई आदमी गाली दे रहा है तो हँसो, ऐसा ही महापुरुषों ने किया है, जैसे एक उदाहरण है कि एक बार गौतम बुद्ध प्रचार करते हुए एक गाँव में गए, वहाँ के लोग उनसे चिढ़ते थे | एक दुष्ट व्यक्ति ने उनके सामने आकर के गाली देना शुरू किया - ढोंगी है, पाखण्डी है, इस प्रकार उनके विरुद्ध अनेकों अपशब्द कहता गया किन्तु वह चुपचाप सुनते रहे, तब तो उसका क्रोध और अधिक बढ़ गया और वह क्रोधावेश में बोला – "अरे, बड़ा बेशर्म है, बोलता भी नहीं है, चुप है |" तब भी गौतम बुद्ध कुछ नहीं बोले | अन्त में अत्यधिक क्रोधवश वह दुष्ट व्यक्ति बोला - "नहीं बोलता है, भाग जा |" तब बुद्ध भगवान् बोले – "महाशय ! मैं आपके घर पर आऊँ और आप मुझको बहुत-सी चीजें भेंट दें और मैं नहीं लूँ तो वे चीजें कहाँ जाएँगीं ?" तो वह (दुष्ट व्यक्ति) बोला – "अरे मूर्ख, वे चीजें वहीं की वहीं रह जाएँगीं |" गौतम बुद्ध बोले –"ठीक है, आपने मुझे इतनी गालियाँ दीं और मैंने एक भी गाली नहीं ग्रहण की अर्थात् सारी गालियाँ आपके पास ही रह गईं |" तब वह दुष्ट आदमी शर्मिन्दा हो गया और सारे लोग हँसने लग गए | भगवान् बुद्ध की विजय हो गई, शान्ति की ऐसी ही विजय होती है | ऐसा महापुरुषों ने किया है, वही भगवान् कृष्ण करके दिखा रहे हैं | ऐसा अगर हम लोग भी करने लग जाएँ तो बड़ी ऊँची विजय हो जाती है |

प्रहसन – बहुत जोर से हँसना, दोनों (कौरव-पाण्डव) सुनने लग गए , 'हा ऽ हा ऽ ऽ हा ऽ ऽ ऽ हा ऽ ऽ ऽ ऽ' ऐसे जोर से कृष्ण हँसे दोनों सेनाओं के बीच में, कौरव भी सुन रहे थे, पाण्डव भी सुन रहे थे कि अरे, ये तो कृष्ण हँस रहे हैं | कृष्ण हँसते हुए अर्जुन (जो दुःखी हो रहा था) से बोले | ये सब चीजें सीख लो, कहाँ हँसना है ? कोई गाली दे रहा है, क्रोध के समय या दुःख के समय (तो) हँसना चाहिए, ये चीज तुमको महापुरुष बना देगी |

यहाँ से अब भगवान् का उपदेश शुरू होता है | यहाँ से ही शंकराचार्यजी ने गीता पर भाष्य लिखा है | अब तक इससे पहले तो सामान्य बातें थीं, अब वास्तविक गीता का उपदेश शुरू होता है |

श्लोक – ११

श्रीभगवानुवाच –

अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे ।गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पण्डिताः ॥११ ॥

श्रीभगवान् ने कहा – 'अशोच्यान्' – शोक नहीं करना है किसी के लिए | संसार के हर प्राणी अशोच्य हैं | 'अशोच्यान्' शोक जिनके लिए नहीं करना चाहिए, उनके लिए तू 'अन्वशोचः' शोक कर रहा है, अशोच्यनीय- जिनके लिए शोक नहीं करना है, उनके लिए तू शोक कर रहा है और प्रज्ञावादांश्च भाषसे – 'प्रज्ञावाद' बुद्धिमानी की बातें कह रहा है (भाषसे – कह रहा है), क्योंकि गतासून् – जो मर गए, अगतासून् – जो जिन्दा हैं, असून् – प्राण, गत – चले गए , जिनके प्राण चले गए और जिनके प्राण नहीं गये, उनके लिए शोक नहीं करना चाहिए | जिन्दा लोगों के लिए भी शोक नहीं करना चाहिए | जीवित के लिए कैसे दुःख करते हैं लोग ? अपना लड़का है, वह बात नहीं मान रहा है तो माँ-बाप दुःखी होते हैं और कहते हैं कि अरे ! हमारा लड़का हमारी बात नहीं मानता है, या वह लड़का कुमार्गगामी है, जुआ खेलता है, शराब पीता है, दुःख दे रहा है अपने माँ-बाप को तो ऐसी स्थिति में भी माँ-बाप को दुःखी नहीं होना चाहिए | यहाँ तक कि मरे लोगों के लिए भी शोक नहीं करना चाहिए क्योंकि जो मर गए वे तो मर ही गए, जो जीवित हैं उनके लिए भी शोक करने से क्या फायदा ? गतासून् - कोई मर जाए अथवा अगतासून् - नहीं मरे, दोनों के लिए जो पण्डित हैं, वे शोक नहीं करते हैं 'नानुशोचन्ति पण्डिताः' | पण्डित वही है जो (जिन्दा या मुर्दा के लिए) शोक नहीं करता है | इसमें (इस श्लोक में) भगवान् ने उपदेश दिया – "शोक करना पण्डितों का लक्षण नहीं है, जिसको जरा भी शोक पैदा हुआ, वह पण्डित नहीं है |" शोक कभी नहीं करना चाहिए, भगवान् ने गीता में सबसे पहली बात यही कही है | शोक करने से तेज नष्ट हो जाता है | 'प्रज्ञावादांश्च भाषसे' - भगवान् अर्जुन से कहते हैं कि जिनके लिए शोक नहीं करना चाहिए, उनके लिए तू शोक करता है और फिर भी विद्वानों की तरह बात कर रहा है | **श्लोक – १२**

न त्वेवाहं जातु नासं न त्वं नेमे जनाधिपाः ।
न चैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम् ॥

अहम् – मैं, जातु नासं – पहले नहीं था, ऐसा नहीं है, न आसम् – नहीं था, ऐसा नहीं है; अर्थात् जब भगवान् श्रीराम थे, श्रीकृष्ण थे तब भी हम लोग थे | न त्वं नेमे जनाधिपाः – तुम नहीं थे, ऐसी भी बात नहीं है (तुम भी थे), इमे जनाधिपाः – ये राजा लोग भी थे | ये सृष्टि जब से चल रही है तब से सब हैं, शरीर बदल जाता है लेकिन राम के समय भी हम लोग थे, कृष्ण के समय भी थे | न चैव न भविष्यामः – आगे नहीं रहेंगे, ये भी बात गलत है | 'सर्वे वयम्' – हम सभी, अतः परम् - इससे आगे नहीं रहेंगे, ये भी बात गलत है, शरीर बदल जाता है लेकिन हम लोग सदा रहेंगे; सदा थे, हैं और सदा रहेंगे, इसलिए शोक नहीं करना चाहिए | शरीर बदल जाता है किन्तु आत्मा नहीं मरती है, आत्मा सदा रहेगी इसलिए उदास नहीं होना चाहिए, रोना नहीं चाहिए, गीता में यही प्रथम ज्ञान भगवान् ने दिया | इस ज्ञान के रहने से मनुष्य को शोक नहीं रहता है | शोक कभी नहीं करना चाहिए, सदा हँसना चाहिए |

क्रमशः...

(भवसागर कैसे पार करें ?)

अन्धे बन जाओ, आँख बंद कर लो। जो होशियार बनते हैं बनने दो, जो आँखे खोलते हैं खोलने दो पर तुम आँखें बंदकरके दौड़ जाओ, तुम पार हो जाओगे। यही भक्ति मार्ग है |

श्रीमद्भागवत माहात्म्य कथा

(भागवत-कथा से चराचर-जीवोद्धार)

श्रीबाबामहाराज द्वारा कथित श्रीभागवतजी (२२/२/१९८५)

देखो - दुनिया में पैसा वालो बड़ो मानो जाये, गरीब छोटो मानो जाय लेकिन ये बात गलत है, ऐसा तो नासमझ लोग कहें जिनके अंदर ज्ञान नहीं है, जो पशुवत् हैं | यहाँ इस सम्बन्ध में एक बड़ो सुन्दर श्लोक कह्यो गयो है – **"सकलभुवनमध्ये निर्धनास्तेऽपि धन्या निवसति हृदि येषां श्रीहरेर्भक्तिरेका |"** समस्त लोकों में, ब्रह्माण्ड में, जो निर्धन हैं, वे ही धन्य हैं, ये कैसे ? निर्धन होय के कैसे धन्य हैं, निर्धन तो संसार में अभागो मानो जाय | नहीं, जिसके हृदय में भगवान् की भक्ति है, वही धन्य है क्योंकि भक्ति से बड़ो कोई धन नहीं है और संसारी धन तो मनुष्य को नरक में ले जाय | अच्छा तो जब भगवद्भक्ति जाके हृदय में है तो वाको फल कहा है, फल ये है कि **"हरिरपि निजलोकं सर्वथातो विहाय प्रविशति हृदि तेषां भक्तिसूत्रोपनद्धः ||"** (भा.मा.३/७३) जा प्राणी के हृदय में भक्ति है, वाके लिए भगवान् श्यामसुन्दर भी अपने निज लोक को सर्वथा छोड़ दें और अपने वा दिव्य धाम को भी छोड़कर – **'प्रविशति हृदि तेषाम्'** उन लोगन के हृदय में, वा कुठरिया में घुस जायें, जहाँ भक्ति है, क्यों घुस जायें, **भक्तिसूत्रोपनद्धः** जैसे कोई डोरी से बँध करके लट्टू नाचे तो वैसे ही कृष्ण भी भक्तिसूत्र से बँध करके, लट्टू बन करके वाके हृदय में प्रवेश कर जाएँ | इसीलिए गोपियाँ गाती हैं – **"हरि लटुआ री, हरि लटुआ |"** गोपियाँ गारी गाती हैं तो कहती हैं कि श्यामसुन्दर तो लट्टू हैं और प्रेम की डोरी में बँधकर नाच्यो करें, इनकी कोई सत्ता ही नहीं है | सनकादिक मुनिजन कहते हैं कि हम इनकी और अधिक कहा महिमा बतावें कि या श्रीमद्भागवत के आश्रय से वक्ता और श्रोता सभी कृष्ण के समान हो जाएँ, कहवे वारो और सुनवे वारो दोनों को ही समान फल मिलता है, कोई घटती-बढ़ती नहीं है, ऐसा नहीं कि श्रोता को वक्ता से कम फल मिले, ऐसो अंधाधुंध अर्थात् अति विशेष-विचित्र असीम करुणामय दरबार है | यह भागवत की महिमा है | इस भागवत के धरातल पर सब कृष्ण के समान हो जायें | जब ये महिमा सनकादिक ने बताई तो (भागवत-माहात्म्य के चतुर्थ अध्याय में) सूतजी कहते हैं कि प्रभु अपने धाम में विचार करने लगे कि ये तो भागवत की बड़ी विचित्र महिमा कही सनकादिक ने, अब ये महिमा मुझे सत्य करके दिखानो भी है | तो जब वैष्णवन (भगवद्भक्तन) के चित्त में भगवान् ने अलौकिक भक्ति देखी सो वाई समय उन्होंने अपनो धाम छोड़ दियो | **"निजलोकं परित्यज्य"** ये बात स्पष्ट है कि भगवान् की भक्ति की महिमा ऐसी है कि वाके प्रभाव से भगवान् अपने धाम को तुरंत छोड़ दें –

"नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च |
मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद ||" अरे चार भक्त जहाँ बैठकर **"राधे कृष्ण राधे कृष्ण कृष्ण कृष्ण राधे राधे | राधे श्याम राधे श्याम श्याम श्याम राधे राधे ||"** या प्रकार से कीर्तन करवे लग गए, वहीं प्रभु आ गये, प्रभु कोई ऊपर आकाश में थोड़ी रहें | जब ये महिमा कही गयी कि जहाँ पर भक्ति है, वहाँ प्रभु आ जायें हैं तो उसी समय वहीं पर श्रीभगवान् आ गये | **बोलो युगलसरकार की जय.....!!** अब आये श्यामसुन्दर, कैसे आये, सभा जुर रही है, बड़े-बड़े ऋषि-महर्षि बैठे हैं, तीर्थ वगैरह बैठे हैं, नदियाँ बैठी हैं और सबको भक्ति की महिमा के द्वारा साक्षात् दर्शन हो रहे हैं | जब श्यामसुन्दर आये तो उनकी छटा ऐसी अति सुशोभित ह्वै रही है –

वनमाली घनश्यामः पीतवासा मनोहरः |

लो, यह वंशी व्रज में ही रहे, बाहर नहीं रहै, जब ब्रज के बाहर की लीला करें तो श्यामसुंदर वंशी को छोड़ दें, कहें कि या वंशी के योग्य अब हम नहीं रहे | ब्रजरसिक लोग लिखें कि वंशी और चक्र में विरोध है, कृष्ण ब्रज में अस्त्र धारण नहीं करें और ब्रज के बाहर मुरली धारण नहीं करें, यह ब्रज में कृष्ण की पहचान है इसीलिए ब्रज के रसिकजन कहें – "**हमारो मुरली वारो श्याम |**" हमारो कृष्ण कौन है ? जो चक्र-वक्र फिरातो होगो, ठीक है किन्तु हमारो जो कृष्ण है, वामे तो एक विशेषण है – "**हमारो मुरली वारो श्याम |"** यही पहचान है हमारे कृष्ण की | "**बिन मुरली वनमाल चन्द्रिका, नहिं पहचानत नाम ||**" जब मुरली नहीं, वनमाला नहीं, मयूरचन्द्रिका नहीं है, तो अब कृष्ण भी आय गये तो हम पहचानते नहीं कि भाई तुम कौन हो ? यह ब्रज-रसिकों की वाणी है तो यहाँ पर श्यामसुन्दर आये तो मुरली लेकर आये, उन्होंने विचार कियो कि अगर हम और चीज लेकर जायेंगे तो ये ब्रजरसिक लोग आँख, नाक भौं सिकोड़ लेंगे, इनका पता नहीं है, ये बड़े अटपटे हैं, ये तो कहते हैं –

"**हम हैं राधे जू के बल अभिमानी,**
टेढ़े रहें मोहन रसिया सों बोलें अटपटी बानी |"

या लिये श्यामसुन्दर यहाँ आये तो मुरली लेकर आये **"परमानन्दचिन्मूर्तिर्मधुरो मुरलीधरः"** आते ही श्यामसुन्दर भक्तन के हृदय में प्रवेश कर गये, तभी तो आनन्द मिले जब श्यामसुन्दर हृदय में विराजें हैं | **"आविवेश स्वभक्तानां हृदयान्यमलानि च |"** जब दूल्हा चले तो वाके पीछे बारात भी चलेगी, बिना बारात के फिर दूल्हा कहा काम को या बिना दूल्हा के बारात कहा काम की | अब यहाँ दूल्हे राजा तो चल दिए, फिर पीछे की बारात कहा करेगी, वह भी सरकने लगी, जितने भी भगवान् के पार्षद हैं उद्धव आदि भक्त तथा जो वैकुण्ठवासी भक्त लोग पहले से वहाँ गूढ़ रूप से स्थित थे, वे भी वहाँ प्रकट हो गये और श्यामसुन्दर के आते ही उनकी 'जय-जयकार...' करने लगे | **बोलो - कृष्ण कन्हैया लाल की जय, बोलो - वंशी वारे की जय, बोलो - मुरली वारे की जय |** बड़ो जय-जयकार भयो | नन्दनंदन के साक्षात् विराजने पर हर आदमी उनकी जय जयकार बोलने लगो, कुछ देर तक तो सभा में जय-जयकार की ही ध्वनि लगातार होती रही क्योंकि आनन्द रूप है नन्द को लाला (नन्द के आनन्द भयो) और यहाँ तक कि ऐसे जयकारा लगे कि **"तत्सभासंस्थितानां च देहगेहात्मविस्मृतिः"** सबको हमारो शरीर कहाँ, हमारो घर कहाँ, कहाँ लौटनो है, कहाँ जानो है, सब भूल गये, ऐसे आनंद के जयकारा लगे और श्यामसुन्दर के दर्शन से सबके रोम-रोम पुलकित ह्वै गये | जब ये सब कांड भयो तो नारदजी ठाड़े भये, ऐसी सभा में कौन बोले, या लिए नारदजी ठाड़े भये और सनकादिक मुनियों से बोले – "हे मुनीश्वरो ! ये महिमा मैंने कुछ अलौकिक ही देखी, अभी तक तो मैंने सुनने वालेन की ही सद्गति सुनी थी, अब कह रहे हैं कि जहाँ श्रीमद्भागवतकथा हो रही, वहाँ पर जो मूढ़ लोग थे, शठ लोग थे, और जो पशु-पक्षी थे

"मूढाः शठा ये पशुपक्षिणोऽत्र
सर्वेऽपि निष्पापतमा भवन्ति |"

जितने भी जीव-जन्तु थे, उनके सब पाप नष्ट ह्वै गये, ये महिमा विचित्र है, अरे भाई ! हम भजन कर रहे हैं या कोई योग कर रहे हैं तो हमारे पाप नष्ट हो गये, ये ठीक है किन्तु पास वाले के पाप नष्ट हो जायें, ये बड़े आश्चर्य की बात है कि खावें हम और पेट तुम्हारो भरे, ये कैसी बात है, याइ लिये तो कह रहे हैं नारदजी कि ये श्रीमद्भागवत की अलौकिक महिमा मैंने यहीं देखी कि भले श्रोता वगैरह तर जायें तो कोई बात नहीं है लेकिन यहाँ पर तो पशु-पक्षी जो बैठे थे, मैंने देखो कि वे सब निष्पाप हो गये, तो इसलिये मनुष्य-लोक में, कलियुग में, पाप को नष्ट करने वाली वस्तु श्रीमद्भागवत की सप्ताह कथा के समान कोई नहीं है और ये तो कोई एक नवीन मार्ग प्रकाशित कियो मुनिजन ने, अबई तक ऐसो मार्ग नहीं हो, सात दिन कितनो थोड़ो-सो समय है, सात दिन में ही इतनो बड़ो चमत्कार |क्रमशः...

कैसी ऋतु सामन की आई, जामें झूलन की बहार ||

कोयल कैसी गाती डोलैं
मोरा नाचैं पंखन खोलैं
दादुर और चकोरा बोलैं
पीउ पीउ ये राटैं पपैया झींगुर की झनकार |
इन्द्र-धनुष ऊग्यो रंगीलो
बादर झमक चढ़्यो गरबीलो
मन्द-मन्द गरजै बरसीलो
नहनी-नहनी बूँदरिया की ठंडी परै फुहार |
ऐसे बचन कहैं मनमोहन
चलीं छबीली चन्द लजोहन
जाय छिप्यौ बदरी के गोहन
रेशम की डोरन ते झूला पर्‌यो कदम की डार |
झूला नव फूलनहिं सँवार्‌यो
फूलन सब सिंगारहि धार्‌यो
गोद उठाय प्रिया बैठार्‌यो
दोनूँ झूला गावैं बरसै गहवर रस की धार ||

(पूज्य बाबाश्री द्वारा रचित 'रसिया')

झूला झूल रहे पिय प्यारी, तीज हरियाली आई है ||

हरी-हरी लता झूम रही प्यारी
छाय रहीं धरती पै न्यारी
मानों सारी हरी सँवारी
हरे हरे वृक्षन में ऋतु ये जोबन लाई है |
श्यामा-श्याम हिंडोरे झूलैं
अरस-परस ते मन में फूलैं
प्यारी बतियाँ कह-कह भूलैं
देखो देखो यह झूलन की ऋतु मन भाई है |
डालन पै बैठे पंछी गन
खेलैं चोंचन में दै चोंचन
पीवैं बरसा के झीने कन
झूलन में रस बरसै कारी घटा सुहाई है |
तीज मनावैं पंछी ब्रज के
लाल लाड़िली के उत्सव के
मोरा नाचैं पंख खोल के
भँवरा छेड़ैं खरज, रागिनी कोयल गाई है ||

(पूज्य बाबाश्री द्वारा रचित 'रसिया')

|

आप <u>साधना चैनल</u> पर प्रात: ०६:४० से पूज्य श्री रमेश बाबा महाराजजी एवं प्रात: ०७:०० बजे से ब्रजबालिका साध्वी मुरलिकाजी का नित्य सतसंग देख सकते हैं

Shelter of Bhagvaan

(Selected from shri Ramesh Baba maharaj's lecture book 'Saargrahita')

One who surrenders unto *Bhagavān*(God), is not to be considered an orphan. Orphan is one who hankers unto money, and surrenders unto this material world. One who accepts money is a beggar, is poor and in him resides material desires because he has no faith in *Bhagavān*.

Mira Bai has said –

Payo ji mahne to Ram ratan dhan payo

Vastu amolak di mahare satguru, kirpa kar apnayo

Janam janam ki punji payi,

jag mein sabhi khovayo

Kharche nahi koi chor na levai, din-din badhat savayo

Sat ki naav khevatiya satguru, bhavsagar tar aayo

Mira ke prabhu GirdharNagar, harash 2 jas gayo

Bhagavān is the real wealth. One who leaves His shelter and surrenders unto money is not a devotee.

Listen, I'm not praising myself but I am telling you this to increase your faith and determination that this is the truth. Till today, I haven't kept any penny with me. There may not be a poor person like me in the world but even then great and incredible works, services of Dham and devotees have been completed from this place, Maan Mandir.

When I came to Braj, I used to live beneath trees. I didn't have hut and today the biggest ashram exists at Maan Mandir where hundreds of devotees render devotional service. Many people come and ask, "What will these sadhus, mendicants do tomorrow, how will they earn, what will they eat without formal education?" Such foolish and ignorant people come, those who consider formal, overrun worldly education alone as education. They do not even know that there is no lesson above and beyond the discourses on devotion and devotional services. Therefore, we need to practice and execute devotion with this firm faith and determination that devotional service to Supreme Lord is the highest education.

Bhagavān gives food and shelter to even those who are thieves and robbers. He is the Lord of the worlds. Then will He not provide for those who love Him? That's why devotees should not worry about their maintenance and protection.

Bhojanacchadane chintam vritha kurvanti vaisnavah

Yoaso visvambharo devah sa kim bhaktanupekshate

(Mahabharat paandav gita) ***(continue.....)***